सप्त ऋषि वृतान्त

महर्षि शिवब्रतलाल
एम. ए.

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

महर्षि शिवव्रतलाल कृत पुस्तकों की सूची

क़ानून ख़्याल	१)
आदर्श भारतीय वीरांगनायें	१)
दृष्टान्त सन्देश	१)
कथा कल्पद्रुम	१)
निरहद्दार मोती (उपन्यास)	१)
राजस्थान की ललित लल०	१)
सहज विचार	१)
राजभक्तिनि मीराबाई	॥)
उपदेशांजलि	॥=)
राजभक्त गोपीचंद व सुदामा	१)
आदर्श भारतीय महिलायें	॥।)
शब्द सार	॥।)
शाही पतिपरायण उपन्या.	१॥)
कर्म सुधार	॥)
हितोपदेश	॥)
आत्मिक प्रायमर उर्फ़	
आत्मिक ज्ञान प्रकाश	
शाहीफूल (उपन्यास)	१)
इब्राहीम अधम	॥=)
परमार्थ सुधार	॥)
कथनांजलि	॥)
ऋषि वृतान्त	॥।)
जैनवृतान्त	॥=)
वीर पुरुष उर्दू	॥।)
शब्द गुंजार प्र० भाग उर्दू	१)
कबीर जोग उर्दू भाग १	१॥)
" " " २	१॥)
महारामायण सम्पूर्ण	५)
महारामायण अनुभव खंड पूर्वार्द्ध व उत्तरार्द्ध व सिद्धि खंड सजिल्द	१॥)

मिलने का पता :—

शिव साहित्य प्रकाशन मण्डल

पो० दयालनगर (अलीगढ़) उ० प्र०

मुद्रक— अनन्तराम राघव, राघवप्रिंटिंग प्रेस अलीगढ़।

सप्त ऋषि वृतान्त

लेखक
महर्षि शिवव्रतलाल वर्मन एम. ए.

— :o: —

सम्पादक
नन्दूभाई
(निजामाबाद दक्षिण)

— :o: —

अ० सहायक सम्पादक
देवीचरन मीतल
लेखराजनगर, अलीगढ़

प्रथमबार] सर्वाधिकार सुरक्षित [मूल्य ।।।) प्रति

विषय सूची

विषय

१. भूमिका ५

२. प्रार्थना ७

३. गुरु महिमा ८

४. विश्वामित्र की कथा ९

५. वशिष्ठ की कथा १८

६. गौतम ऋषि की कथा ३१

७. यमदग्नि ,, ,, ... ४२

८. अत्रेय ,, ,, ... ५४

९. कश्यप ,, ,, ६५

१०. भारद्वाज ,, ,, ... ७५

अनन्तराम राघव द्वारा राघव प्रिंटिंग प्रेस, अलीगढ़ में मुद्रित।

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

'मनुष्य बनो' हिन्दी मासिक पत्र "मनुष्य बनो कार्या
दयाल कम्पाउण्ड (पेच जामाजी) अलीगढ़ से प्रकाशित होता
परम संत दयाल फ़क़ीरचन्द्र जी महाराज के अनुभवपूर्ण वचन
विशेषरूप से प्रकाशित होते हैं। अवश्य मंगाना चाहिये
केवल ३) रु० वार्षिक।

संतों के दर्शन——सन्त महात्माओं के फोटो व सुन्दर चित्र सब साइज़ में नीचे लिखे पते पर मिलते हैं। एक बार मंगाकर देखिये।

भाई श्याम राव, नन्द कुटिया, नाम पल्ली, लाल टीकरी
हैदराबाद दक्षिण, मकान नं० ८३४।

'दयाल' उर्दू मासिक पत्र दयाल स्वरूप श्री नन्दसिंह जी के सम्पादकत्व में १६–१७ वर्ष से प्रकाशित हो रहा है। इसमें महर्षि शिवव्रतलाल जी महाराज के अनमोल वचन निकलते हैं। अवश्य मंगाइये। इसका वार्षिक मूल्य डाक खर्च सहित ६।) रु० है।

शब्द गुल्ज़ार (उर्दू)—इस पुस्तक में महर्षि जी के अत्यन्त रसीले और मनोहर शब्दों का संग्रह है। रोज़ाना पाठ के लिये एक बड़ी उत्तम पुस्तक है। रियासत हैदराबाद में तो हर जगह के सत्संग में इसका पाठ होता है। केवल थोड़ी कापियाँ हैं। एक कापी का मूल्य १।) रु० डा० ख० अलग।

'दयाल योग' (उर्दू)—महर्षि शिवव्रतलालजी महाराज का संक्षिप्त जीवन चरित्र अमूल्य वचनों सहित तीन भागों में २२० पृष्ठ में है। हर भाई के पढ़ने योग्य है। मूल्य केवल २॥) रु० डाक खर्चा अलग।

शब्द सार (हिन्दी) नित्य पाठ के लिये अमूल शब्दों का संग्रह। मूल्य केवल ॥।) डा० ख० अलग।

पता—**'शिव साहित्य प्रकाशन मंडल, दयाल भंडार,
केशवगिरी, हैदराबाद दक्षिण'**

परमसंत दयाल फ़कीरचन्द जी महाराज कृत पुस्त

१. इन्सान बनो उर्दू ॥=)
२. आवागवन ,, १)
३. विश्व हितैषी ,, १॥)
४. विश्व प्रेमी ,, ॥)
५. मानव धर्म प्रकाश ,, १॥)
६. नश्वरे अनवर ,, ॥।)
७. सदाये फकीर ,, ।=)
८. हयाते नौ ,, ।)
१०. निष्कलंक अवतार ॥)
११. फकीर शब्दावली ।=)
१२. परमार्थ सुधार ॥)
१३. इब्राहीम अधम ॥=)
11. Real Independance -/4/
14. Truth & Reality -/6/-
15. Independance leaflets -/2/-
१६. दयाल संहिता उर्दू महर्षि शिवव्रतलाल कृत ॥।)
१७. गुटका शब्द संग्रह हि
१८. योगी हिन्दी

पता:-

'मनुष्य बनो' कार्यालय
दयाल कम्पाउण्ड (पेच जामाजी)
अलीगढ़ (उ० प्र०)

—:※:—

फ़कीर साहित्य प्रकाशन द्वारा प्रकाशित पुस्तकें

१. "मनुष्य बनो" हिन्दी ॥=)
२. विश्व शान्ति ,, ।)
३. मानव धर्म प्रकाश प्र० भाग ,, ॥।)
४. आवागमन उर्फ जीवन रहस्य १)
५. पचास वर्षीय फकीर अनुभव ॥)
६. उन्नति मार्ग ।)
६. एक बावले व दाना फकीर (दयाल फकीर) की जीवनी ।)
८. एक फकीर की घोषणा सप्रेम अमल
९. यथार्थ संदेश ।)
१०. Be man -/4/-

१. महर्षि शिवव्रतलाल कृत महारामायण अनुभव खंड व सिद्धि खंड १॥)

मिलने का पता—

फकीर साहित्य प्रकाशन
शिव भवन, लेखराज नगर अलीगढ़ सिटी (उ० प्र०)

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

भूमिका

सप्त ऋषियों की कथाओं का महत्व

सप्त ऋषियों की कथायें तो पाठकों ने पढ़ी और सुनी होंगी मगर यहाँ पर विशेषता यह है कि इनमें आध्यात्मिक दृष्टिकोण भी वर्णन किया है। इसके उपरान्त आज के समयानुसार हम पाठकों का ध्यान दो बातों की ओर आकर्षित करना चाहते हैं।

बिना आत्म दर्शन किये मनुष्य का अहंभाव, अहंकार या मैं पना दूर नहीं होता और पूर्ण शान्ति प्राप्त नहीं होती। यह बात विश्वामित्र जी की कथा से स्पष्ट है कि उन्होंने राज ऋषि से ब्रह्म ऋषि कहलाने के लिये वशिष्ठ जी के १०१ पुत्र तक मार डाले, मगर वशिष्ठ जी ने उनको ब्रह्म ऋषि नहीं कहा। इससे वे बहुत दुखी हुए। उसी दशा में उनको आत्म-साक्षात्कार हुआ और उसके उपरान्त ही उनका अहंकार मिट सका। ब्रह्म ऋषि कहलाने की इच्छा भी नहीं रही और जब वे वशिष्ठ जी के पास पहुंचे तो वशिष्ठ जी ने स्वयं ही उनको ब्रह्म ऋषि के नाम से सम्बोधन किया।

आज के जमाने में घरों में तथा देशों में अहंभाव या अहंकार का पूरा जोर है। यही कारण है कि हर जगह लड़ाई, झगड़े, उत्पात, वैमनस्य आदि-आदि रोग जोरों पर हैं। इन रोगों को दूर करने का उपाय केवल यही है कि ऋषियों, महात्माओं, सन्तों के आदेशों और शिक्षाओं पर अमल किया जाय और उन पर चल कर उस परम तत्व, मालिक या आत्मा का साक्षात्कार किया जाय।

(२) दूसरी बात जो इस सम्बन्ध में कहना चाहते हैं वह यह है कि लोगों की यह धारणा सी हो गई है कि आज के समय में संत और महात्माओं की शिक्षाओं का अमल कठिन है। जब ऋषि महात्मा वनों में जप-तप करते थे वह समय और था और आज का समय बिल्कुल विपरीत है। इतने

कठिन साधन लोगों से नहीं बन सकते। यह बात बहुत कु
अंशों में ठीक है मगर हम यहाँ यही बताना चाहते हैं
ये हमारे ऋषि अधिकाँश में गृहस्थी हुए हैं, सन्तान वाले
हैं मगर उनका जीवन था पूर्ण सुख शान्ति का। गृहस्थी होते हुए उन्होंने सुख-शान्ति की खोज (Research) की। अब उनकी खोज को जीवन में लाकर सुख-शान्ति प्राप्त करना है। हमको स्वयं खोज नहीं करना है। हम देखते हैं कि कितनी कठिन खोज और समय लगाने के बाद रेल, तार, टैलीग्राफ, टेलीफोन, बिजली आदि-आदि के आविष्कार हुए और हम उनसे सुगमता से लाभ उठा रहे हैं। ठीक इसी प्रकार प्राचीन ऋषियों ने खोज की है और जीवन बिताने के नियम वर्णन किये हैं। वर्तमान काल के सन्त महात्माओं ने अपनी खोज की और उन ऋषियों की शिक्षा और उपदेश पर चलने के लिये सरल ढंग बताये।

कलियुग में उतने कठिन जप-तप साधन करने की आवश्यकता संत महात्मा नहीं बताते। मगर संयम नियम तो हर काम में आवश्यक है। प्रतिदिन के काम धंधों में भी नियम और संयम काम करता है। संयम और नियम की बातें स्कूलों में ही पढ़नी शुरू हो जाती हैं, मगर कठिनाई यह है कि उन पर अमल नहीं किया जाता। ब्रह्म ऋषि कहलाये जाने से नहीं होते, वे बनते हैं अर्थात् उस अवस्था को प्राप्त कर लेने पर ब्रह्म ऋषि हो जाते हैं। इसी प्रकार केवल पाठ पढ़ लेने से अथवा व्याख्यान या भाषण सुन लेने से काम नहीं बनता, रोटी-रोटी पुकारने से पेट नहीं भरता। भूख तो जब मिटेगी, रोटी खाने से ही मिटेगी। इसी प्रकार हमारा जीवन सुख और शान्तमय तब ही बन सकेगा जब हम संयम और नियमों का पालन करेंगे। अतः ऋषियों के कथाओं के अलंकारों को समझकर उनके पालन में लगिये। (सम्पादक)

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

प्रार्थना

पद कमल में सिर झुके नित, दोनों कर को जोड़ कर।
आप ही का हो रहूं, मन तोड़ मोड़ मरोड़ कर।
कठिन माया जाल है अरु, कठिन काल कराल है।
कठिन जग जंजाल है, दुख पाया नाता जोड़कर॥
शान्ती जाती रही, अरु भ्रान्ती चित में बसी।
आप पर दृष्टि गई, आया शरण सब छोड़कर॥
दया कीजे महर कीजे, लीजे चरणों में लगा।
आप ही का हो रहूं, भरमों का मटका फोड़कर।
राधास्वामी दीन हित, भव निधि से बेड़ा पार कर।
मेरी है यह बन्दना, संसार से मुख मोड़कर॥

—:o:—

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

गुरु महिमा

दाता दानी देवता, नहीं गुरु सम कोय।
ज्ञाता ज्ञानी चतुर नर, गुरु कृपा से होय॥
भव सागर अति गहिर है, सूझे वार न पार।
गुरु खेवटिया जब मिले, खेव लगावे पार॥
माया भ्रम और काल भय, जीवत कबहूँ न जाय॥
यह बन्धन तो तब कटें, सतगुरु होवें सहाय॥
जनम जनम कठिनाइयाँ, भोगे विपति कलेश॥
गुरु ने पकड़ी बाँह जब, रहा न भव दुख लेश।
का मुख से स्तुति करूँ, गुरु समरथ दातार॥
तुम्हरो कृपा अपार से, पाई बुद्धि मति सार।
ढूँढ़-ढूँढ़ थक-थक रहे, मिला न ज्ञान विवेक।
चरण कंवल की छाँह में, सूझा एक अनेक।
प्रेमदान प्रभु दीजिये, पद सरोज की धूर।
सत का नूर हृदय बसे, बाजे अनहद तूर॥
भरम-भरम सब भरमत फिरें, पढ़-पढ़ ग्रन्थ अनेक।
परमारथ निधि तब मिले, पकड़े गुरु की टेक॥
गुरु चरण पर वारिये, देह गेह और शीश।
गुरु से निशदिन माँगिये, प्रेम प्रीति बकसीस॥
गुरु पद नित बल जाइये, तजिये मान गुमान।
गुरु से क्षण-क्षण मांगिये, भक्ति भाव का दान॥
गुरु पद अरपूँ रात दिन, तन मन धन और प्राण।
यही सार का सार है, और ज्ञान का ज्ञान।

— :o: —

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

सप्त ऋषि वृतान्त

कैलाश के ऊँचे शिखर पर शिव जी के पास बहु ऋषि बैठे हुये थे। रात का समय था। यह सलाह हुई कि सब अपनी अपनी कथा संक्षेप में सुनावें। यह बात सबको भली लगी। सबसे प्रथम विश्वामित्र ने अपनी कथा प्रारम्भ की। इनकी कथा निम्नलिखित है—

(१) विश्वामित्र की कथा

भगवान विश्वामित्र बोलेः—

सूर्य्य भगवान का रथ पाताल देश की ओर चक्कर लगाता हुआ चला गया। उसके सुनहरी चमकते हुये झंडे की किरणें दृष्टि से ओझल होगई। दुनिया में घुप अँधेरा छा गया। अन्धकार इतना प्रचंड होगया कि हाथ को हाथ नहीं सूझता था। सूर्य्य का नेत्रों से बहुत कुछ सम्बन्ध है। सूर्य्य न हो तो नेत्र क्या कर सकते हैं। अन्धेरे में कोई क्या टटोल सकता है और कब तक टटोल सकता है। टटोलने वालों को पग पग पर ठोकरें खानी पड़ती हैं! फिर भी कुछ दिखाई नहीं देता। यही दशा अज्ञानियों की होती है। ज्ञान नहीं, ज्ञान का प्रकाश नहीं, ज्ञान का चमत्कार नहीं। बेचारे बेबशी की हालत में पड़े हुये अनाप शनाप हाथ पाँव मारा करते हैं, और तेली के बैल की तरह घूम फिर कर जहाँ थे वहाँ ही रह जाते हैं। किधर जाँय, कहाँ जाँय, अन्त में झकमार कर पड़ रहते हैं। और चैतन्यशक्ति का अनादर करके जड़ बन जाते हैं। अन्तःकरण में मैल है अज्ञान है। जलते हुये दीपक के ऊपर

नोट—इन दोनों कथाओं में कल्पवृक्ष और कामधेनु का वास्तविक स्वरूप दिखलाया गया है।

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

घड़े पर घड़े धरे हुये हैं। कोई देखे तो क्या देखे और कि देखे। कुछ दृष्टिगोचर नहीं होता। जीवन भाररूप होजात

रात अँधेरी थी। आँखों पर अँधकार का पर्दा पड़ा था। आसपास के घरों ने इसे और भी घना कर दिया था। आकाश पर घटाटोप काले बादल छाये हुये थे। तारागण, जो झिलमिलाता हुआ प्रकाश दिया करते थे, बुरी तरह से दब गये थे। काले बादलों ने इनको छापा मार कर दबोच लिया था। इनका टिमटिमाना बन्द था। कभी कभी अन्धकार से घृणा करने वाला पपीहा 'पी कहाँ' 'पी कहाँ' का शोर मचाता था। इसका स्वर भयानक था। इसी प्रकार अज्ञानरूपी अन्धकार से सताये हुये सच्चे जिज्ञासु का मन भी रोने झींकने का अभ्यस्त है। अन्धेरी रात्रि में पी कहाँ? अज्ञान में आत्मा कहाँ? सूर्य्य अस्त है। चेतन का प्रकाश दबा है। दोनों की एक सी दशा है। दोनों व्याकुल और चिन्तित हैं।

मेरी दशा दूसरी थी। अन्धकार को कोई नहीं चाहता। बच्चा खाट पर पड़ा हुआ है। जलते हुये दीपक को देख कर मुस्कराता है। खिल खिलाकर हंसता है। जलते हुये लौ से खेलने को लालायित है। दीपक बुझा। चिराग़ गुल पगड़ी गायब वाली कहावत चरितार्थ होती है! डर के कारण चादर ओढ़ लेता है और दबक कर सो रहता है। मनुष्य, पशु और पक्षी सब रोशनी को प्यार करते हैं। यही कारण है कि प्राकृतिक प्रकाश के अभाव में कृत्रिम प्रकाश के आविष्कार की आवश्यकता हुई और मनुष्य ने विवश होकर तेल और बत्ती द्वारा प्रकाश की कमी को पूरा करने की कल्पना को हृदय में स्थान दिया।

थोड़ी देर मैं यों ही सोचता विचारता रहा। वशिष्ट ऋषि

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

की प्रतिद्वन्द्वता का कांटा हर समय दिल में खटकता था। कहलाने के लिये क्या-क्या यत्न नहीं किये। राज छोड़ छोड़ा। कठिन से कठिन तप किये। योग और ध्यान से जोड़ा। साधन और अभ्यास में वर्षों व्यतीत कर दिये। जन्म बीत गया मगर ऋषि ने मुझे ब्रह्म ऋषि नहीं कहा। मैंने उसके साथ शत्रुता की। उसके पुत्रों को मार डाला मगर उन्होंने अपनी हठ नहीं छोड़ी। जब मुझ से कहा राज ऋषि ही कहा! मैं आश्चर्य में था कि वह मुझे ब्रह्म ऋषि क्यों नहीं कहता। मैंने उसको इस हठ का कठोर दंड दिया। उसे पुत्र हीन तक बना दिया मगर उसने अपनी टेक नहीं छोड़ी। क्या करूं ब्रह्म ऋषि कैसे कहलाऊं। यह विचार थे जो मेरे हृदय को सता रहे थे। बहुत कुछ सोच विचार किया मगर कुछ भी काम न आया। वह नहीं मानता। बराबर मुझको राजऋषि कहे जाता है। वह मुझे क्यों यह ऊंची पदवी नहीं देता? तपस्या व्यर्थ गई। शत्रुता भी काम न आई। लालच भी उसको अपनी टेक और हठ से न हटा सका। इस पर भी आश्चर्य यह कि जब मिलता है हंसता और मुस्कराता हुआ मिलता है। हृदय में न किसी बात का दुःख है न शोक है। संतान का भी शोक अनुभव नहीं करता। न हृदय में मेरी शत्रुता का ध्यान है।

इस सोच विचार में घंटों व्यतीत होगये। मस्तिष्क सोचते-सोचते थक गया और भिन्ना उठा। सिर पर हाथ पड़ा जो मारे क्रोध के कबाब हो रहा था। अन्त में विवश होकर कुशासन बिछाकर लेट गया। मगर नींद कहाँ! नींद तो उचट गई थी। मानसिक भावनाओं और वेदनाओं के सताये हुये व्यक्ति को नींद कब आती है! कौन जाने मैं कितनी देर तक इसी तरह आसन पर पड़ा रहा। अन्त में यह दशा अच्छी नहीं लगी। करवट बदलकर उठ बैठा। दुनिया में सन्नाटा छाया हुआ था।

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

कुत्ते भी कहीं नहीं भौंकते थे। आश्रम यद्यपि जंगल में मगर उस समय गीदड़ और लोमड़ी भी शायद सोग किसी की भी आवाज़ सुनाई नहीं देती थी। मैंने आंखें फाड़ कर देखना चाहा मगर क्या दिखाई देता! आकाश पर अब भी बादल छाये हुये थे। मैंने मन में कहा—'विश्वामित्र! तुझसे भी अधिक कौन अभागी होगा! एक भ्रमात्मक विचार के पीछे तूने सब कुछ खो दिया। ब्रह्म ऋषि की पदवी में धरा क्या था पीछे जिसके लिये इतना ऊधम मचाया। अपने को बिगाड़ा और दूसरे का भी बिगाड़ किया। तू राजा था। बड़े विस्तृत देश का शासक था। भली प्रकार राज करता था। धन दौलत सब कुछ प्राप्त था। प्रजा शुभ चिन्तक और राज भक्त थी। उस पर तुझको संतोष नहीं हुआ। राजपाट से अलग हुआ। जंगलों की धूल छानी। तप जप में कभी ऊंचे चढ़ा कभी नीचे गिरा। मैनिका ने तपस्या भंग की। इसका फल यह हुआ कि शकुन्तला का जन्म हुआ। मान लिया कि तू फिर चेत गया। अपनी त्रुटि का संशोधन भी कर लिया, मगर क्या हुआ! निन्दा का टीका जो माथे पर लगा वह कभी दूर होने वाला नहीं है। वशिष्ट तुझको ब्रह्म ऋषि नहीं कहता और तू यों ही व्यर्थ में अज्ञान और भ्रमके चक्र में मारा गया। दोनों दीन से गये पांडे हलुआ मिला न मांडे।'

इतना सोचना था कि आँखें डबडबा आईं। कोई पास था ही नहीं। अंधेरे में रोने लगा और बिलख-बिलख कर परमात्मा के चरणों में गिड़गिड़ाने लगा।

जय अज अमर गोविन्द, गोचर, द्वन्द हर धरनी धरम्।
जय नित सगुण निरगुण निरूप, अनन्त अनादि अगोचरम्।'
प्रभु! दीन मैं आधीन सेवक, जानि करुणा कीजिए।
प्रभु भक्त वत्सल दीन बन्धो! चरण शरण निज दीजिए॥

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

तेरी माया निस दिन छलत ऋषि मुनि, पार नहिं को
मेरी दशा देख विनीत कृपा-सिन्धो ! चरन
तुम सर्व शक्ति समूह दाता, लोभ, भवभय
जय विश्व व्यापक विरज विभो, कामादि खल दल गंजनम् ॥

मैं स्तुति पढ़ता जाता था और रोता भी जाता था। चित्त पर विशेष प्रकार की आर्त्तता छाई हुई थी। प्रार्थना करने से चित्त को शान्ति और सन्तोष मिलता है। पहली बेचैनी दूर होगई। प्रार्थना वास्तव में बड़ी प्रभाव शाली वस्तु है। इसका तत्काल फल होता है। मालिक से प्रार्थना करना ऐसा ही है, जैसे बच्चे का माँ से दूध माँगना है। जिस तरह बच्चे के रोने से मां के स्तन में दूध उतरता है, वैसे ही प्रार्थना करने से गंगा रूपी दया की अमृत धार नीचे की तरफ़ आने के लिए उमड़ती है। यह कारण है कि प्रार्थना करने से शान्ती आती है और कोई निराश नहीं जाता।

जब मैं प्रार्थना कर चुका तो नज़र उठाकर देखा। सामने एक प्रकाश रूपी आकृति दिखाई दी, जिसकी चमक दमक सूर्य की किरणों से कहीं अधिक थी। इसका आकार मनुष्य के रूप का था। वह मेरी कुटी से थोड़ी दूर था। अच्छी तरह दृष्टि-गोचर नहीं होता था। मगर इसमें विशेष प्रकार की आकर्षण शक्ती थी जो मुझे अपनी ओर खींचे लिये जाती थी। मैंने बहुत चाहा कि मन को रोकूँ पर कहना सरल है करना कठिन है। वैसे तो अंधेरे में बिल्ला रहा था मगर इस प्रकाश को देखकर दिल में उमंग प्रगट हुई। तुरन्त उठ खड़ा हुआ और उसकी ओर पग बढ़ाया। ज्यों २ मैं आगे बढ़ता जाता था वह प्रकाश रूपी आकृति भी पीछे खिसकती जाती थी। मुझ में शक्ति नहीं थी कि मैं विचार कर सकूँ कि यह क्या वस्तु है और

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

मैं क्यों इसकी ओर खिंचा चला जा रहा हूँ। कुटी से बहु
यों ही चला गया। आगे एक निर्जन मैदान था। पृथ्वी स
कोई वृक्ष या टीला भी नहीं था। इसके बीच में वह ख
गया। मैं भी इसके पास ठिठक गया। अब मेरे और उसके बीच में थोड़ी ही दूरी थी। ध्यान से उसको देखने लगा। प्रकाश ही प्रकाश था। प्रकाश के सिवाय कुछ नहीं था, मगर इसमें आकाशी शरीर के सब आकार उपस्थित थे। ऐसा ज्ञात होता था मानो किसी बड़ी आकाशी शक्ति ने प्रकाश के साँचे में मनुष्य का ढाँचा दिखाने का प्रयत्न किया है। उसके आँख, कान, नाक और सारी इन्द्रियों से इन्द्र धनुष की चित्ताकर्षक किरणें भभक-भभक कर निकल रहीं थीं। इन किरणों में जादू का आकर्षण था। क्या मजाल कि मनुष्य देखे और उसकी ओर न खिंच जाये। मेरी दशा ठीक वही थी जो चुम्बक को देखकर लोहे की होती है। मैं थोड़ी देर तक चुपचाप भौचक्का होकर आश्चर्य की तस्वीर बना हुआ उसको देखता रहा। बड़े ध्यान से देखा। बार-बार देखा। मन की तृप्ति नहीं हुई। जी चाहता था उससे बातचीत करूं मगर साहस नहीं होता था। दस पन्द्रह मिनट बीत गये। या तो वह आश्चर्य का पुतला था या मैं आश्चर्य का पुतला था। एक देह था दूसरा प्राण था। एक प्रकाश था दूसरी छाया थी। शरीर और आत्मा के मिलाप का समय था। जब मैं देर तक उसको देख चुका, मन में विचार किया कि किस तरह से पूँछू कि तू क्या है, क्यों आया है, और अपने आकर्षण शक्ति से क्यों मुझे यहाँ तक खींच लाया है।

यह विचार हिलोरें ले ही रहा था कि वह प्रकाश की आकृति खिल खिलाकर हंस पड़ी। इसका हंसना था कि चारों ओर बिजली के प्रकाश की वर्षा होने लगी। जैसे गंगोत्री से गंगा की धार बहती है, वैसे ही इससे बाहर की ओर प्रकाश की

धारें बहने लगीं। अन्तर केवल इतना था कि गंगोत्री से एक धार निकलती है, इससे सहस्रों धारें निकलने लगी प्रकाश में मैंने पृथ्वी की ओर देखा। ऊपर नीचे चारों ओ कुछ दिखाई देने लगा। आंख ऊपर की ओर उठाई। आकाश के फाटक खुल गये। सहस्रों लोक, लाखों तारागण, अनगिनत ब्रह्मांड दृष्टिगोचर हुए, किन्तु इस प्रकाश के आगे सबका प्रकाश फीका था। जैसे सूर्य के प्रकाश में दीपकों की चमक निकट से दिखाई तो देती है, परन्तु मन्द होती है, वैसे ही हमारे सूर्य चन्द्रमा और तारागण की दशा थी। मेरे आश्चर्य की सीमा नहीं रही। घबराया, भगवन ! यह क्या भेद है ? यह क्या वस्तु है ? मैंने चाहा कि फिर प्रश्न करूँ। वह फिर हँसा। फिर प्रकाश का तेज दुगना हो गया। इस बार मैंने ध्यानपूर्वक देखा तो उसमें जहाँ भिन्न-भिन्न प्रकार के रंगों का प्रकाश था, साथ ही एक प्रकार की काले रंग की भी चमकती हुई धार दिखाई पड़ी, जिसके देखने से मेरे मनमें उदासी छागई। यह क्यों ऐसा हुआ। मैं उसका उत्तर न दे सका। इस बार मैंने ढाढ़स बाँध कर पूछा—'तू कौन है ? और तेरे यहां आने का क्या कारण है ? तेरे शरीर से प्रकाश की कुल धारें तो प्रसन्नता देती हैं परन्तु इस श्याम धार के कारण मेरा हृदय बैठा जाता है। झटपट बता, देर न कर, नहीं तो मैं विषाद के भार से बेसुध होकर गिर पड़ूंगा।'

उसने मुस्करा कर कहा- "तत्त्ववेत्ता विश्वामित्र ! तू मुझ को नहीं जानता ? यह तेरी दीनता है या तू सचमुच कहता है ?"

मैंने उत्तर दिया—"मैंने तुझको कभी नहीं देखा। कैसे कहूँ कि मैं तुझको जानता हूँ।"

वह बोला—"अच्छा ! रात दिन का रहना-सहना; तेरा अस्तित्व मेरे ही कारण है। मैंने अपने ही जीवन से तुझको

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

जीवित कर रखा है और तू कहता है कि मैं जानता ही नहीं हूँ
अनाड़ियों के जैसा कथन है। यदि कोई तुझे अज्ञानी कह
तू कभी मानने वाला नहीं था और कौन जाने तू क्रो
आ जाता और अपने खड्ग से उसका सर भुट्टे की तरह उड़ा देता। यह तेरा स्वभाव है। तू वास्तव में अज्ञानी है, अन्धकार में है। मैं तेरे साथ में हूँ और तू नहीं जानता। मेरे रहने का जो घर है उसके तीन आँगन हैं, पाँच कोठरियाँ हैं, ग्यारह अन्दर बाहर खिड़कियाँ हैं, दस दरवाजे हैं, मेरा घर आनन्द और प्रसन्नता का स्थान है परन्तु अत्याचारी तूने मेरे घर में रक्त की बूँदें छिड़कीं। तूने सारे घर को अपवित्र कर दिया। इससे गंदगी और सड़ाइंद की दुर्गन्ध आने लगी। रहने वालों का जीवन विषैला हो गया। जहाँ शान्ति और आनन्द होना चाहिए था, वहाँ भयानक जन्तु बसते हैं। यह सब तेरी करतूत हैं और तू कहता है कि मैं नहीं जानता।"

मैं बड़े आश्चर्य में पड़ गया। ऐ भगवन्! यह पुरुष क्या कह रहा है? इसका और मेरा साथ कब था। कब मैंने इसके घर में लहू-लुहान किया। कैसे इसका निवास स्थान मेरे कारण विषैला होगया। यह स्वयं मेरे लिये एक उलझाने वाली गुत्थी है। इसने प्रश्न का उत्तर तो कुछ दिया नहीं और एक समस्या हल करने के लिये रख दी है और मुझ पर व्यर्थ लाँछन लगाता है।

वह फिर बोला—"क्यों विश्वामित्र! क्या यह सच है कि तूने वशिष्ठ पर आक्रमण किया और उसकी निरपराध संतान को मार डाला?"

मैंने कहा—"हाँ, यह सत्य है, परन्तु वह द्वेषी है, मुझको ब्रह्मर्षि नहीं कहता। मेरा अपमान करता है। उससे तेरा क्या

सम्बन्ध हैं ? मैं तेरे घर में उसके लड़कों का रक्त छि
गया था ?"

वह मेरी बात सुनकर मुस्कराया। फिर चौथी बा
के कौंधे की वर्षा होगई। कहने लगा—"वशिष्ठ तुझको ब्रह्मर्षि कहें क्यों ? क्या तू ब्रह्म को जानता है ? जब तुझको ब्रह्म के भेद का पता तक नहीं है और जब तू आत्मदर्शी नहीं है, तब तू ब्रह्मर्षि कैसे कहा जा सकता है। भला बता तो, इसका तेरे पास क्या उत्तर है ?"

मैंने हाथ जोड़ कर कहा—"ऐ पुरुष ! तू सत्य कहता है। मैंने त्रुटि की। वास्तव में ब्रह्मज्ञानी नहीं हूँ। अब मैं रुच्ची बात सुनकर पछताता हूँ; परन्तु यह बतादे कि तेरा मेरे कर्त्तव्य से क्या सम्बन्ध है और तेरे तीन आँगन, पाँच कोठरियाँ, और दस द्वार वाला घर कहाँ है। इसको तो मैंने न कभी आँखों देखा न कानों सुना, रक्त छिड़कना तो एक ओर रहा। मैं ने निस्सन्देह त्रुटि की। मैं कल ही ऋषि से अपने अपराध की क्षमा मागूँगा। तू इस रहस्य को हल कर दे।

वह पाँचवीं बार फिर मुस्कराया, फिर प्रकाश चारों ओर फैल गया और वह प्रसन्न होकर गाने लगा।

गुरु बिन ज्ञान मिले नहिं साधो, ज्ञान बिना नहिं मुक्ती।
योग बिना नहिं मन बुधि निर्मल, योग नहीं बिन युक्ती॥

ऐ विश्वामित्र ! तू मनमत है गुरुमत नहीं है। जा ! गुरु मुख द्वारा महा वाक्य का श्रवण, मनन, निदिध्यासन कर और वशिष्ठ तुझको मेरा पता बतायेंगे। इतना सुनले। मैं तेरी अपनी आत्मा हूँ।

इन अन्तिम शब्दों में क्या जादू था। आँख खुल गई। न वह निर्जन मैदान है न वह प्रकाश का पुतला है। मैं अकेले

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

अपने आश्रम में कुशासन पर पड़ा था, मगर हृदय बिषाद वेग से चूर हो रहा था।

दूसरे दिन मैं वशिष्ठ के पास गया। उसके पाँव पर गि और उन्होंने मुझको स्वयं ब्रह्मर्षि कह कर गले से लगा लिया। और अपना शिष्य बना लिया। उनसे क्या वार्तालाप हुई, वह स्वयं आपको सुनायेंगे। मुझको अब भी कहते हुए लज्जा आती है। मैंने वशिष्ठ को गुरू धारण किया और कृत-कृत्य होगया।

जा खोजत ब्रह्मा थके, सुर नर मुनि देवा।
कहैं कबीर सुन साधवा, कर सतगुरु सेवा ॥१॥
वस्तु कहीं ढूंढें कहीं, केहि विधि आवे हाथ।
कहैं कबीर तब पाइये, जब भेदी लीजे साथ ॥२॥
भेदी लिया साथ कर, दीन्हीं वस्तु लखाय।
कोटि जन्म का पन्थ था, पल में पहुँचा जाय ॥३॥
यह तन विष की बेलरी, गुरू अमृत की खान।
सीस दिये जो गुरू मिलें, तोभी सस्ता जान ॥४॥
कोटिन चन्दा ऊगवें, सूरज कोटि हज़ार।
सतगुरू मिलिया बाहिरा, दीसे घोर अँधार ॥५॥
गुरु बिन माला फेरते, गुरू बिन देते दान।
गुरू बिन नाम हराम है, पूछो वेद पुरान ॥६॥

—❀—

(२) वशिष्ठ की कथा

वशिष्ठ जी बोलेः—

ऐ ऋषियो! फ़कीर का वृतान्त सुनो।
जो कुछ मुझ पर गुज़री, उसको भी ज़रा सुनो।

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

पर बीती क्या सुनाऊँ, सुनो अपनी बीती को।
ध्यान देकर मेरी कहानी, ज़रा सुनो॥

यह विश्वामित्र जो ऋषियों में श्रेष्ठ हैं, बड़े बुद्धिमान बड़े तपस्वी हैं। पहले ये राजा थे जिनके भय से शत्रुओं का हृदय काँपता था। एक समय ये मेरे पास आये। मैंने राजा समझ कर बड़ी आवभगत की। मैं साधु हूँ मेरे पास क्या धरा था। केवल कामधेनु गाय मेरे पास थी। राजा जाति और देश का स्वामी समझा जाता है। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र सब उसका सम्मान करते हैं। संसार में राजा से बढ़ कर किसी का पद नहीं है, चाहे ऋषि मुनि कोई भी हो, सबको उसका मान करना चाहिए; क्योंकि यदि राजा न हो तो संसार का प्रबन्ध नष्ट भ्रष्ट हो जाता है और कोई किसी की नहीं सुनता। राज के भ्रष्ट होने से कर्म धर्म सब मिट्टी में मिल जाते हैं और देश में अराजकता फैल जाती है। मैंने विश्वामित्र का आदर के साथ स्वागत किया और कामधेनु गाय की सहायता से जो कुछ मुझसे हो सका उनके आदर सत्कार और सेवा में कोई कमी नहीं रक्खी। विश्वामित्र ने देखा कि मैं एक फूस के झोंपड़े में रहता था जिसमें प्रत्यक्ष में कोई भी सामग्री नहीं थी, मगर जब उनके और उनकी सेना के आवश्यकतानुसार सब सामग्रियाँ दम के दम में इकट्ठी हो गईं तो उनको आश्चर्य हुआ। पूछने लगे कि तुम देखने में तो साधारण साधू हो और तुम्हारा झोंपड़ा दरिद्रता का रूपक बना हुआ है परन्तु तुम कैसे तुरन्त जो चाहते हो एकत्रित कर लेते हो। मुझको विश्वामित्र से छुपाना तो था नहीं। उनके अध्यात्म (रूहानियत) के फुरने का समय भी निकट आ रहा था। मैंने बड़ी नम्रता से कहा कि भगवन्! मेरे पास कामधेनु गाय है जो सारी आवश्यकताओं को पूरा कर देती है। उन्होंने कहा कि यह

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

कामधेनु गाय तुझको दे दो। भला मुझको इससे कब हो सकता था। मगर विश्वामित्र उसके अधिकारी बने थे, अतः मैंने उत्तर दिया कि वह तुमको नहीं सकती। इस पर विश्वामित्र अति क्रोधित होगये और चाहा कि मुझसे कामधेनु गाय बलात् छीन लें, मगर जब वह लड़ने को उतारू हुये तो कामधेनु गाय के शरीर से सैकड़ों राक्षस और दैत्य उत्पन्न हो गये और उन्होंने उनकी सेना को दम के दम में मार गिराया। यह दशा कई बार हुई। अन्त में विश्वामित्र हार गये और कहने लगे कि ब्रह्मतेज के सामने क्षत्रिय का तेज कुछ भी नहीं है और यह ब्रह्मर्षि बनने के लिये तप करने लगे, जिसमें उनको कई प्रकार के अनुभव प्राप्त हुए। एक आध बार उनको लज्जित भी होना पड़ा। इन्द्र ने अपनी अप्सरा के द्वारा उनका तप भंग कर दिया। यह उसके छल-कपट में आ गये और तप को छोड़कर भोग विलास करने लगे। परिणाम यह हुआ कि मैनका के पेट से शकुन्तला उत्पन्न हुई। उस समय अप्सरा तो भय के कारण इन्द्रलोक को भाग गई और उनको अपने किये हुये कर्म पर घृणा होने लगी! चूंकि साहसी थे, फिर संभल गये और अपने तप को पूर्ण कर लिया, जिसके कारण उनमें कई प्रकार की शक्तियाँ उत्पन्न हो गईं। वह अभिमानी बनकर मेरे पास आये। मैं जानता था कि इनमें राज ऋषि के सब गुण और सर्व शक्तियाँ विद्यमान हैं। मैंने कहा कि आइये राजऋषि! इस पर वह आग बबूला होगये, क्योंकि वह चाहते थे कि मैं इनको ब्रह्मऋषि कहूँ मगर मैं झूंठ कैसे बोलता। वह मुझसे शत्रुता करने लगे। तत्पश्चात् कई बार मिले मगर राजऋषि के नाम से सम्बोधन किये जाने पर सदा ही चिढ़ा करते थे। मुझको उनके बैर का तनिक भी ध्यान नहीं था। वह इस बात को जानते भी

थे, मगर सब तपादि करने पर भी उनको मेरे काम धेनु का फिर भी भय था। सामना करने के लिये तो कभी नहीं परन्तु बदनामी कराने का कोई उपाय उठा न रक्खा। यही बल्कि उन्होंने क्रोध में आकर मेरे सब लड़कों को मार डाला।

विश्वामित्र सदा मेरे विरोध पर तुले रहते थे और बहुत बुरी तरह से मेरी खबर लेते थे। मैं जिस बात को "हाँ" कहता था, यह अकारण ही उसको "नहीं" मानते थे। एक अवसर पर मेरी जिह्वा से निकल गया कि संसार में हरिश्चन्द्र से अधिक सत्यवादी कोई राजा नहीं है। यह इतनी सी बात पर बौखला उठे कि उसके झूठा सिद्ध करने के लिये पृथ्वी आकाश को एक कर दिया। उस विचारे के राजपाट को छीन लिया और चूंकि यह तपस्वी थे, इच्छा शक्ति तीव्र थी, स्वप्न की दशा में अपने विचार की धार के बल से उससे अयोध्या के राज देने का वचन ले लिया और राज लेकर उसको विवश किया कि वह अपने आपको दक्षिणा के लिये चाण्डाल के घर बेच दे। ऐसा ही हुआ। उस पर भिन्न-भिन्न प्रकार की बलायें आईं; परन्तु वह अपने सत पर आरूढ़ रहा। इस पर भी उनको मेरी बात का विश्वास कम था।

दूसरे अवसर पर यह मुझसे मिले। कहने लगे। तप व पुरुषार्थ में सबसे अधिक बल है। मेरे मुंह से निकल गया कि सत्संग में अधिक बल है। फिर क्या था यह लड़ने झगड़ने लगे। अन्ततः शेषनाग ने इनको समझा बुझाकर यह बात मनवाई। उस समय इनको अधिक लज्जित होना पड़ा; लेकिन मुझसे विरोध के विचार इनके हृदय से दूर नहीं हुये और इस पर भी वह इच्छा रखते थे कि मैं उनको ब्रह्म ऋषि कहूँ। इसमें उनका दोष ही क्या था? यह तो झूठे गुनावनों के दास

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

हो रहे थे। इसलिये सचाई से दूर रहते थे। ऋषियो! च
हज़ार लिखे पढ़े, हज़ार जप तप योग का साधन करे, तै
यदि हृदय में तनिक भी मलीनता रहेगी तो वह समद
आत्मदर्शी कभी न हो सकेगा और ब्रह्म ज्ञान से सदा वंचित रहेगा। ज्ञान बहुत कठिन है और सहज भी है। इसके लिये मनुष्य को उच्च दृष्टा और विशाल हृदय वाला बनने की आवश्यकता है और जब तक वह ऐसा न हो जाय ब्रह्म ऋषि की पदवी कैसे दी जाय। यह सच है कि मैं इनको सदा राज ऋषि कहा करता था। राज ऋषि उसको कहते हैं जिसने योग आदि का साधन कर लिया हो और सिद्धि शक्ती वाला होगया हो। वह सब कुछ प्राप्त कर सकता है मगर ज्ञान से वह फिर भी दूर रहेगा; क्योंकि योग केवल साधन मात्र है और जो इसी को सब कुछ समझता है वह ब्रह्म ज्ञान से अभी कोसों दूर है। इसलिये मैं ने इनको राजऋषि ही कहना उचित समझा; मगर मन में इनका सम्मान फिर भी बहुत कुछ था। जैसे राजा सब में सम्मानित होता है वैसे ऋषियों में राजऋषि की पदवी है।

अगस्त ने पूछा—"ऐ! तत्ववेत्ता वशिष्ठ। हम लोग तुम्हारी बातों को बड़े ध्यानपूर्वक सुन रहे हैं मगर विश्वामित्र की अनसमझी को दूर करने के लिये तुम तनिक यह तो बताओ कि कामधेनु क्या वस्तु है।"

वशिष्ट जी बोले कि कामधेनु नाम है आत्मा की शक्ति का, जो बुद्धि और मन से बहुत समीप है। जब मनुष्य आत्मदर्शी हो जाता है, यह गाय उसकी सेवा में स्वयं उपस्थित हो जाती है और वह जो कुछ चाहे केवल अपने विचार से ही सब कुछ कर सकता है। आत्मा सारी शक्तियों का भंडार है। आत्मदर्शी की संकल्प शक्ति में वह बल है कि यदि वह चाहे

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

तो पृथ्वी और आकाश के तत्वों को पलट सकता है के सारे भावों की जड़ मन में है। मन जब तक सामग्रियों में फंसा हुआ बहिरमुखी बना रहता है, तक कामधेनु गाय उसको नहीं मिल सकती। इसके लिये अन्तर मुखी वृति का होना आवश्यक है, ताकि मन में वैराग्य उत्पन्न हो। मनुष्य प्रकृति के पदार्थों में न उलझे। उसका रूप और अपना रूप जानकर दुनियाँ के आधार पर न रहे बल्कि उसका आधार आत्मा बन जाये। निज स्वरूप में उसकी स्थिति हो। उस समय उसके लिये कुछ दुर्लभ नहीं है। इसी स्वरूप के ज्ञान को कामधेनु कहते हैं। इसी को कल्पद्रुम और कल्पवृक्ष भी कहते हैं। नाम और आकृति जैसी चाहो रखलो। प्रायः लोग असलियत को नहीं समझते; क्योंकि स्थूल बुद्धि वालों को सूक्ष्म वस्तु की उस समय तक समझ नहीं आती जब तक कि उनको स्थूल रूप में न वर्णन किया जाय। यही कारण है कि कवि बहुधा सूक्ष्म विषय को अलकार के रूप में वर्णन करते हैं। जब उसका रूपक बाँध दिया जाता है तो फिर सबको कुछ न कुछ समझ आ जाती है।

जम्दग्नि ने प्रश्न किया कि यह सब ठीक है किन्तु आत्मदर्शी ऋषि किसी की हानि नहीं करते। उनको जो चाहे कष्ट दिया जाय मगर आपकी बातों से संशय होता है कि आपके ब्रह्म ज्ञानी होते हुये भी आपकी संकल्प शक्ति रूपी कामधेनु ने विश्वामित्र को बार-बार पराजय किया। इसमें क्या भेद है?

वशिष्ठ जी बोले—यह सब ठीक है। मैंने विश्वामित्र को कभी हानि पहुँचाना नहीं चाहा। उनकी क्षति स्वयम् होगई। उन्होंने सुन सुनाकर यह परिणाम निकाल लिया था कि

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

कामधेनु गाय कोई स्थूल रूप का पशु है और चाहते थे कि उसव मुझसे छीन लें। उनकी विरोध की धार मन से निकली औ मेरे मन से टकराई। चूंकि विश्वामित्र का मन बुरे भावों व भण्डार बन रहा था, इसलिये जब उसके भाव मेरे मन से मिले उनको स्वयम् शक्ति मिल गई और उन्होंने ही लौट कर इन को पराजय किया और अपने ही हथियार से मारे गये। आप सब लोग जानते हो कि यह प्रपंच पुरुष और प्रकृति के मेल से होता है। यह दो हैं और इस कारण इनके सम्बन्ध से जो कुछ उत्पन्न होगा वह भी दो प्रकार के रूप वाला होगा। स्त्री व पुरुष, रात और दिन, ब्रह्म और माया, सुख और दुख, यह साथ साथ रहने वाले हैं। जहां एक होगा वहां दूसरा भी होगा; क्योंकि प्रपंच दो से खाली नहीं रहता। जहां संकल्प है वहां विकल्प अवश्य होगा। संकल्प यदि देवता है तो विकल्प राक्षस है। यह दोनों भी चित्त की वृतियां हैं। यह सब में रहती हैं। ज्ञानी तो इनको अपना रूप नहीं जानता। अज्ञानी इनको अपना रूप जानता है, इसलिये वह दुःखी तथा सुखी हुआ करता है। यह दोनों प्रकार की वृत्तियाँ कामधेनु गाय के स्वांस हैं जिनको तुम प्राण व अपान भी कह सकते हो।

मैंने क्या किया? मैंने कुछ भी नहीं किया। विश्वामित्र के विचार स्वयम् कामधेनु के भावों से टकराये और जब वह फिर विश्वामित्र के पास गये उनमें निर्बलता आगई।

सूर्य्य के सम्मुख जब आतशी शीशा रखा जाता है सूर्य्य उसको नहीं जलाता। वह स्वयम् ही सूर्य्य की किरणों से भभक उठता है। इसी प्रकार उस मनुष्य में जो कुछ मैल व गन्दगी होती है जलकर राख हो जाती है।

ऐ ऋषियो ! तुम मुझ पर किसी प्रकार का लाँछन न [illegible] जिसको जैसा अधिकार है वह आप सृष्टि से वैसे [illegible] लेता है। अज्ञानी मूर्ख ईश्वर को कर्त्ता धर्त्ता मा[illegible] । ईश्वर तो निर्लेप है वह न किसी को सुख देता है और न किसी को दुख देता है; क्योंकि उसमें किसी प्रकार की इच्छा नहीं होती। मगर जब जीवों के कर्म ईश्वरीय नियम से टकराते हैं उनको अपने आप फल मिल रहता है। यह सिद्धान्त है कि जो जैसा करेगा वैसा पावेगा। इसमें ईश्वर का क्या अपराध है। अपराध तो जीवों के कर्म का है। ईश्वर न किसी की हानि करता है और न किसी को लाभ पहुंचाता है। जो जैसा है ईश्वर के समीप होने से उसको वैसा ही फल मिल रहता है। कुरूप और सुरूप दोनों ही प्रकार के लोग दर्पण के सम्मुख खड़े होते हैं। कुरूप का प्रतिबिम्ब बुरा और सुरूप का अच्छा पड़ता है। यह यों ही होता है। इसमें दर्पण का क्या दोष है। उसमें अपनी कोई इच्छा नहीं है। जैसा चाहो अपना प्रतिबिम्ब देखलो। यदि हंसते हो तो हंसता हुआ प्रतिबिम्ब दिखाई देगा। यदि रोते हो तो रोती हुई सूरत दिखाई देगी। यदि इसमें कोई व्यक्ति दर्पण पर आरोप लगावे तो समझ लेना चाहिये कि उसको सिद्धान्त का पता नहीं है। यही दशा साधू की भी है। तुम जानते हो कि जितने शरीरधारी हैं विराट पुरुष के पुत्र होने के कारण उनमें संकल्प विकल्प की शक्ति रहती है। साधु न बुरा करता है न भला करता है। अच्छे लोग जो साधु के सत्संग में जाते हैं उनकी दुर्भावनायें उभर खड़ी होती हैं; क्योंकि साधू ईश्वर के पुत्र हैं। उनमें भी ईश्वर

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

के जैसे प्रभाव होते हैं। साधारणतया लोग यह कहते हैं कि
के दाहिनी ओर प्राणियों के शुभ कर्मों के फल और बाईं
अशुभ कर्मों के फल रहते हैं। अच्छे लोग श्रद्धा के
दर्शन करने पर अच्छे फल के भागी होते हैं। बुरे लोग अश्रद्धा के साथ देखने से बुरे फल पाते हैं। इसी कारण से वर्जित किया जाता है कि जब तक तुम में श्रद्धा न हो किसी साधू के पास न जाओ। उनमें भी दर्पण का जैसा गुण है। दर्पण मनुष्य के रूप को प्रकाशित कर देता है। यह तुम स्वयं अनुभव करके देख सकते हो।

इसी प्रकार साधू के पास जाने से अशुभ कर्मों को गतिमान होने का भय रहता है। साधू न किसी के मित्र हैं न शत्रु हैं। जो उनको मित्र समझते हैं वह भी ग़लती पर हैं और जो उनको शत्रु जानते हैं वह भी भूल हुये हैं; क्योंकि मित्र वही होता है जो किसी का शत्रु हो और शत्रु वही होता है जो किसी का मित्र हो। मित्रता, शत्रुता तथा राग, द्वेष साथ-साथ रहते हैं। समदर्शी ज्ञानी इन दोनों से परे है। अब आप विचार करो कि विश्वामित्र को मैंने परेशान किया अथवा वह स्वयं अपने विचार और दुर्भावनाओं के शिकार हुये। उनकी भावनायें राक्षसी थीं, कामधेनु के भावों से मिलकर सहस्रों और लाखों असुर और दैत्य, जो वास्तव में मन की वृत्तियाँ थीं, उत्पन्न हो गये और ऋषि को व्याकुल कर दिया और वह दुखी हो गये। उनका दुखी होना अनिवार्य था; नहीं तो उनके कर्म कैसे कटते।

गौतम ने प्रश्न किया:—'प्रभु! आपने कर्म के कटने की बात अच्छी कही। तनिक इसकी भी व्याख्या कर दीजिये ताकि कोई भ्रम व संशय न उत्पन्न हो।'

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

वशिष्ठ जी खिलखिला कर हंसे। आपका प्रश्न अच्छा है। यह एक रहस्य है जो सचमुच आरत अ के बताने के योग्य है। तुमको याद होगा कि मैंने अभी कि सत्संग का बल पुरुषार्थ से बड़ा होता है। पुरुषार्थ में तो मनुष्य का अहंकार (अहम् भाव) सम्मिलित रहता है जो उसको असली ध्येय के प्राप्त करने में बाधक होता है। सत्संग में सन्त का संग रहता है जो संस्कार रूप से मन में स्थित होकर अवसर पाकर अपना काम कर लेता है। जो व्यक्ति गंगा में स्नान करेगा, पहले गंगा के जल को उसके शरीर के मैल के साथ रगड़ करनी पड़ेगी। फिर कुछ समय के पश्चात् जब मैल उतर जायगा तब शरीर निर्मल हो जायगा। इसी प्रकार जब कोई व्यक्ति साधु के साथ लड़ाई करता है उसकी बुरी भावनायें उभर खड़ी होती हैं और उसको शुभ वासनाओं व शुभ कर्मों की ओर शीघ्र आकर्षित नहीं होने देतीं। वह भांति-भांति के उत्पात करता है, मगर धीरे-धीरे जिस प्रकार उन उत्पातों की धारें हलकी होती जांयगी, उसमें पश्चाताप उत्पन्न होगा। खेंचातानी और पश्चाताप ही कर्म को दग्ध करते हैं और इसी के आधीन एक समय ऐसा आजाता है कि जब मनुष्य रगड़ा खाते-खाते तनिक संभल जाता है। फिर उसमें सच्चाई की फुरणा होने लगती है और वह ठिकाने आ जाता है। सूर्य्य के मिलाप से अग्नि-उत्पादक शीशे के मैल में क्षोभ होना आवश्यक है। नहीं तो वह कैसे निर्मल हो सकता है। इसी कारण कहा गया है। "साधु से झगड़ा भला, साकित संग न मेल"। तुम मेरी पहली बात को सुनकर यह परिणाम न निकालना कि मेरे बचन में पारस्परिक विरोध है। नहीं! मेरे कहने का आशय केवल इतना था कि बुरे मनुष्यों के भाव साधू या ईश्वर के समीप जाने से उभर खड़े होते हैं। उनमें जोश

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

और क्षोभ आता है और फल मिलने लगता है और फ
मिलने से फिर सम्भव है कि शुभ कर्म अपना प्रभाव उत्प
करें। यही दशा महर्षि विश्वामित्र की भी हुई है।

कश्यप ऋषि बोलेः—"यह प्रश्नोत्तर वस्तुतः बड़े चित्ताकर्षक थे। अब आप फिर असल कथा की ओर चलें।"

वशिष्ठ ने कथा का क्रम इस प्रकार प्रारम्भ किया:—विश्वामित्र यदि इन सब बातों को पहले ही से जानते होते तो इनको इतना कष्ट न उठाना पड़ता। मगर यह भी क्या करते। कर्म का नियम अटल है। ऐसा होने वाला ही था। उन्होंने मेरे साथ दाँव पेच करने आरम्भ किये। आप जानते हैं मिट्टी का ढेला चट्टान से टकरा कर टुकड़े-टुकड़े हो जाता है। चट्टान अपने आप उस ढेले की परवाह नहीं करता। उसकी स्थिति ही क्या होती है जिसकी चट्टान को परवाह होती। वह अपनी पूरी शक्ति से चट्टान पर आक्रमणकारी हुआ और आप उससे टकर खाकर नष्ट हो गया। मुझको इनके दाव पेच का तनिक भी ध्यान नहीं था। उन्होंने मेरे लड़कों की हत्या कर दी। अपने मन में समझ बैठे थे कि उस उपाय से मुझको ब्रह्म ऋषि कहने के लिये विवश कर सकेंगे, मगर मैं जिस प्रकार न किसी की खुशामद से प्रसन्न होता हूँ उसी तरह न किसी की निन्दा व शत्रुता का बुरा मानता हूँ। मैं जैसा था वैसा ही रहा, मगर इनकी स्थिति बदलती गई और धीरे-धीरे कुछ के कुछ बन गये।

इनकी जो दशा हुई वह स्वयं उन्होंने अपनी कथा में सुनादी। आप किंचित मुझको इसके दुहराने का कष्ट न दें। हाँ! मैं इतना कहना आवश्यक समझता हूँ कि जब उनके मन में बहुत पश्चाताप हुआ, यह अति दुखी हुये। मन में दुःख उठने से इनके अशुभ कर्म आप ही आप दग्ध हो गये,

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY PURNADAYAL

चूंकि उनके मन से मेरा ध्यान कभी दूर नहीं हुआ ध्यान बुरे भले प्रकार से इनके मन में स्थित होत जब आप से आप उनके बुरे भाव दब गये, मेरे सम का उभार होने लगा और इनको आप ही आप आत्मा का दर्शन होगया। उन्होंने जो मानसिक रूप देखा था, वह स्वयम् उनका अपना विचार ही था। जिस प्रकार का इनको दर्शन हुआ वह शरीर धारी सूक्ष्म शरीर में रहने वाला आत्मा ही था, जिसका गृह यह शरीर है, जिसमें दस इन्द्रियाँ दस खिड़कियाँ हैं और पंच कोष जिसकी पाँच कोठरियाँ हैं, जिसमें उन्होंने मेरे लड़कों के रक्त की बूंदें छिड़की थीं और वह अपवित्र हो गये थे और जिस दुर्घटना का उनको रह-रह कर पछतावा हुआ करता था। जिस रात्रि को उन्होंने स्वपनावस्था में आत्मा के सूक्ष्म शरीर का दर्शन किया, उसके प्रातःकाल वह दीन दुखी होकर मेरे पास आये और मैंने उनको असलियत समझादी।

जिस रात्रि को उनको आत्मा का साक्षात्कार हुआ मुझको भी उनका ध्यान था; क्योंकि यह बार-बार मुझको याद कर रहे थे। इनके मन की धारें निकल कर मेरे मन से टकराती थीं और मुझको इनके आन्तरिक दशा का स्मरण कराती थीं। यह नियम है कि जो जिसको याद करता है वह भी उसको याद करता है।

तुलसी कंवलन जल बसे, रवि शशि बसें अकास।
जो जाके मन में बसे, सो ताही के पास॥

जो ईश्वर का सुमिरन करते हैं, ईश्वर उनका भी सुमिरन करता है। जो गुरू का नाम जपते रहते हैं, गुरू भी उनका ध्यान रखता है। यह पारस्परिक सम्बन्ध है। ऐसा ही हुआ करता है।

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

अभी प्रातःकाल का तारा निकल ही रहा था कि मेरी अरुनधती जाग उठी और चमकते हुये तारे को देखकर कहने लगी—'प्राणनाथ ! क्या संसार में कोई ऐसा पुरुष जिसके प्रताप का तारा इस प्रकार संसार में चमकता है'। मुझको चूंकि विश्वामित्र का ध्यान था, मेरे मुँह से निकल गया—'सुन्दरी ! और तो कोई नहीं है। हाँ ! विश्वामित्र ऋषि की कीर्ति में पूर्णमासी के चन्द्रमा की तरह चमक दमक दृष्टि आती है।' वह बोली कि प्रभु ! आप उन ऋषि की बड़ाई करते हैं। उन्होंने तो आपके पुत्रों तक को व्यर्थ निरपराध मार डाला। यह उनकी तपस्या की दशा है। मैंने कहा कि तू इस समय व्यक्तित्व को लेकर बातचीत कर रही है। पुत्रों के मरने का विचार त्याग करके देख। ऐसा बल और पराक्रम जैसा कि विश्वामित्र में है किसमें है। उन्होंने अपने विचार से दूसरा ब्रह्माण्ड बना लिया। आज वह जिसको चाहें अपने आधीन बना सकते हैं। सबको उनका भय रहता है और सब उनका सम्मान करते हैं। मरना जीना तो साधारण बात है। एक जन्मता है तो दूसरा मरता है। कौन किसके लड़के कौन किसका बाप ! इस विचार को सदा के लिये मन से दूर करदे। और फिर तुमको आप ही आप विश्वास हो जायेगा कि विश्वामित्र कैसे पराक्रमी और पुरुषार्थी हैं !

विश्वामित्र मेरे झोंपड़े के एक कोने में दबके हुये इन बातों को सुन रहे थे। उनके दिल को चोट लगी। वह ख्याल करने लगे "मैं कैसा पापी हूँ कि व्यर्थ इसके पुत्रों को मार डाला। यह फिर भी मेरा शुभचिंतक है। मुँह पर इसने कभी मेरी बुराई नहीं की। पीठ पीछे भी प्रशंसा करता है।" यह सोच और समझकर उन्होंने तत्काल अपने देह पर से सब क्षत्रियों के अस्त्र शस्त्र, जिनसे वह सदा सुसज्जित रहा करते थे, उतार

कर फेंक दिये और बिना आज्ञा रोते हुये मेरे पास मैंने कहा, "आइये ब्रह्म ऋषि विश्वामित्र !" यह सुनक बड़ा आश्चर्य हुआ। कहने लगा—"प्रभो ! मैं जब क पास आया आपने मुझे राजऋषि कहा। मैंने अपनी दुर्भावनाओं से उत्तेजित होकर आपको नाना प्रकार की क्षति पहुँचाई। आज इस विशेष कृपा का क्या कारण है ?" मैंने हंसकर उत्तर दिया—"भगवन् ! पहले आपमें राजऋषि के गुण थे। आप सदा शस्त्रों से सजे रहते थे। मन में राजाओं की भांति अहंकार था। आज देखने से ज्ञात होता है कि वह अहंकार दूर हो गया। आत्मा का दर्शन मिल गया। अब आप रजोगुण के ऊपर आगये। सब अहंकारी भावनायें दब गई। जिनमें यह लक्षण हों, वह ब्रह्म ऋषि कहलाते हैं। यही कारण है कि मैंने आपको ब्रह्म ऋषि कहा है। आप स्वयं सोचें जो जैसा होता है वैसा ही कहा जाता है"।

विश्वामित्र मेरे पाँव पर गिरे। मुझसे अपराधों की क्षमा माँगने लगे। मैंने उनको पहले ही से क्षमा कर रखा था। ऐ ऋषियो ! यह विश्वामित्र के ब्रह्म ऋषि कहलाने की कथा है।

इतना कहकर वशिष्ठ जी चुप होगये और सब उनकी कथा को सुनकर प्रसन्न हुये।

—:❀:—

(३) गौतम ऋषि की कथा

जब वशिष्ठ जी चुप हो गये सब लोग थोड़ी देर के लिये समाधिस्थ होगये। विश्वामित्र जी के चरित्र सचमुच अति चित्ताकर्षक थे। उस पर वशिष्ठ जी की धैर्यता व दृढ़ता अत्यन्त प्रसंशनीय थी। भरद्वाज ऋषि ने उनकी पीठ ठोकी। क्यों

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

न हो। वशिष्ठ ! तुमसे ज्ञान और भक्ति की मर्यादा चली ह
तुम सच्चे ब्रह्म ज्ञानी हो। तुममें ज्ञानियों के सारे लक्ष
विद्यमान हैं। जो लोग जीवन मुक्त पुरुष को देखना चाहें व
तुम्हारा दर्शन करें। यह मिथ्या है कि मनुष्य जीवन मुक्त नहीं हो सकता। तुम उसके जीते जागते उदाहरण मौजूद हो। विश्वामित्र जी की भी प्रशंसा है कि जिन्होंने जो चाहा कर दिखाया। जिस ध्येय को दृष्टि के सम्मुख रक्खा उसी को पूरा कर दिखाया। यह सत्य है कि इनको निर्बलताओं और त्रुटियों का सामना करना पड़ा, मगर ऐसा कौन व्यक्ति है जिनको इनसे काम नहीं पड़ता। जो राह में पग धरता है उसको कभी कभी थकान भी होती ही रहती है। दुख तो उसके लिये है जो अपने ध्येय की ओर नहीं चला।

मारग चलते जो गिरे, ताहि न लागे दोस।
जो मारग पग ना धरे, ता सिर करें कोस॥

तुम दोनों महात्मा धन्य हो और अमर कीर्ति के अधिकारी हो। अब गौतम जी की बारी है कि वह अपना वृतान्त सुनावें।

महर्षि गौतम बोलेः—

जवानी के दिन भी खूब होते हैं। नये-नये विचार नई नई उमंगें। जगत बैकुण्ठ का नमूना दृष्टिगोचर होता है। न किसी का दुख न किसी का शोक। जिधर दृष्टि जाती है खुशी के दृश्य दिखाई पड़ते हैं। निराशा और ह्रास की बलायें जो बुढ़ापे के जीवन को कटु बना देती है, जवानी में उनका कहीं चिन्ह भी नहीं दीखता। एक काम नहीं हुआ न सही, उसी समय दूसरे का ध्यान आ जाता है। एक द्वार बन्द हुआ सैकड़ों और खुलने वाले दृष्टि में आगये। जवानी सचमुच जीवन की वसन्त ऋतु है। दिल की कलियाँ खिल जाती हैं

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

और सब ओर उनकी सुगन्ध फैल कर सहस्रों
मस्तिष्क को प्रफुल्लित कर देती है। जो कोई इन
प्रभाव में आगया उसी को कुछ न कुछ खुशी का
गया। सूर्य निकला हुआ है। आकाश पर कहीं बादलों का चिन्ह तक नहीं है। उसका प्रकाश चारों ओर इस तरह चमक रहा है, कि उसके अतिरिक्त और कुछ दिखाई नहीं पड़ता। यदि कुछ दिखाई भी देता है तो वह भी उसी के कारण है। यही दशा युवावस्था की है। जो चाहा कर लिया। आगा-पीछा देखने की आदत नहीं। जिसकी इच्छा हुई उसको प्राप्त कर लिया। उसके प्राप्त करने में अगर मगर का भय नहीं।

मैं अभी युवा था। युवावस्था के आवेश में ताल ठोक कर दुनियाँ के अखाड़े में मल्ल युद्ध करने आया था। दुनियाँ एक हरी भरी 'फुलवारी' ज्ञात होती थी। मैं प्रसन्न था। मेरी प्रसन्नता की कोई सीमा न थी।

एक दिन प्रातःकाल हवन और यज्ञ करके आश्रम की फुलवारी में टहल रहा था। नव विकसित पुष्प शोभायमान हो रहे थे। हरी हरी घास पर ओस की बूँदें ऐसी ज्ञात होती थीं। जैसे हरी चादर पर किसी ने सैकड़ों मोती जड़ दिये हों। पशु-पक्षी सब खुशी से कलरव कर रहे थे। आम के वृक्ष पर कोयल अपना सुरीला राग अलाप रही थी। मोर अकड़ते हुये फुलवारी में पर फैलाये हुये चित्ताकर्षक ढंग से नाच रहे थे। इस दृश्य को देखकर मेरा चित और भी प्रसन्न होगया और मैं परमात्मा की असीम रचना के कार्य व्यवहार पर विचार करने लगा।

अभी इस विषय पर सोचते देर नहीं हुई कि एक सुन्दर हंस आकाश पर उड़ता हुआ मेरी ओर आया और निडर

होकर नीचे उतर कर मेरे पाँव से अपना सर रगड़ने लग पक्षियों का इस प्रकार आचरण करना कोई असाधारण नहीं थी। आप जानते हैं आश्रम के ऋषि किसी को सत नहीं। सब पशु पक्षी उनसे हिलेमिले रहते हैं और विभिन्न रूप से अपना प्रेम प्रगट करते रहते हैं। मुझको इससे तनिक भी आश्चर्य नहीं हुआ; किन्तु मैंने देखा कि हंस के चोंच में एक कंवल का हरा पत्ता दबा हुआ है और उस पर मनुष्य के नाख़ून ने खुरच कर संस्कृत में कुछ लिख रखा है। पत्ता अब भी नया था। उसमें स्याही नहीं आई थी और अक्षर प्रत्यक्ष दिखाई पड़ते थे। मुझको आश्चर्य हुआ। मैंने हंस को पकड़ लिया और उसके मुँह से उस कंवल के पत्ते को लेकर पढ़ने लगा। किसी ने संस्कृत के श्लोक लिख रक्खे थे। उनका अर्थ तुमको सुनाता हूं, सुनोः—

किसको दें दिल अपना कोई, दिल रुबा[1] मिलता नहीं।
किसकी उलफ़त[2] का भरें दम, बावफ़ा[3] मिलता नहीं॥
सुनते आये प्रेम का, रस्ता बहुत दुश्वार[4] है।
चलने की ख़्वाहिश है लेकिन, रहनुमा[5] मिलता नहीं॥
ख़ुदनुमाई[6] ख़ुदपसन्दी[7] का, नहीं नाम व निशां।
बेख़ुदी[8] ग़ालिब है दिल पर, पर ख़ुदा मिलता नहीं॥

ये पद प्रेम से परिपूर्ण थे। उनको पढ़कर मेरा हृदय फड़क उठा। वाह वाह क्या अनोखे बचन थे। मैं इसको पढ़-पढ़ कर मस्त हो जाता था। हंस जो पास ही दाने चुन रहा था कभी-कभी सर उठा कर मेरी ओर देखने लगता। वह बोल नहीं सकता था। दिल था व आंखें थी और अन्तरीय भावों को आँखों से प्रगट कर रहा था। जिह्वा से मनुष्य इतना

(१) प्रेमी (२) प्रेम (३) कृतज्ञ (४) कठिन (५) गुरु (६) अभिमान (७) अहंकार (८) अपनापन न होना।

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

नहीं कह सकता जितना आँखों से कह सकता है। मैं
ओर ध्यानपूर्वक देखा। मुझे यह ज्ञात हुआ कि म
चाहता है कि मैं भी उसी प्रकार कंवल के पत्ते पर कु
कर उसको दे दूँ। यह विचार कुछ इस तरह मेरे हृदय पर जमने लगा कि मुझसे नहीं रहा गया। मैंने आश्रम के सरोवर से एक सुन्दर कँवल का पत्ता तोड़ लिया और चाहे तुम इसको मूर्खता समझो या जो चाहे विचार करो, मैंने जो कुछ अपने मन में सोचा वह आप लोगों से कहना नहीं चाहता। मैंने भी संस्कृत में श्लोक लिखे जिनका भावार्थ यह है:—

कौन कहता है कि ढूँढे से, खुदा मिलता नहीं।
जिनमें हिम्मत है उन्हें, दुनियाँ में क्या मिलता नहीं॥
हर मर्ज की है दवा, और हर मर्ज का है हकीम।
कौन सी जा[1] है जहाँ, दस्ते शफ़ा[2] मिलता नहीं॥
जिनमें इस्तग़ना[3] है उनको, क्या मिलेगा दहर[4] में।
उनको ख्वाहिश ही नहीं है, वर्ना क्या मिलता नहीं॥

मेरे श्लोक इतने जोरदार नहीं थे। हंस जो श्लोक लाया था उनमें जान थी। मुझको लज्जा आई। मगर मैंने सोचा क्या हर्ज है? मैंने जल्दी में नाखून से श्लोक पत्ते पर लिखे। मैंने वह कंवल का पत्ता हंस के सम्मुख रख दिया। वह उसकी प्रतीक्षा में था। चोंच से दबाया और हवा की तरह उसे ले उड़ा और वह जिधर से आया था उसी ओर चला गया।

जब हंस आँख से ओझल होगया मैं सोचने लगा। यह बात क्या है? किसने यह श्लोक लिखकर भेजे हैं? उसका नाम क्या है? कहाँ रहता है? उसका अभिप्राय क्या है? और हंस इनको मेरे पास क्यों लाया? मैंने क्यों यों ही बिना समझे

---

(१) स्थान, (२) आराम देने वाला, (३) संतोष, (४) ज़माना (संसार)।

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

बूझे उत्तर लिखा ? पढ़ने वाला इससे क्या परिणाम निका
अच्छा ! जैसे उसने अपना नाम नहीं लिखा, वैसे मैं
नहीं लिखा। प्रथम तो उससे मिलने की आशा ही न
लेकिन यदि वह मिल गया तो मैंने कोई बात ऐसी नहीं लिखी जो लज्जित करने वाली हो। देखें कि उसके परदे में क्या प्रगट होने वाला है। सबसे अधिक आश्चर्य की बात तो यह है कि यह हंस मेरे ही पास क्यों श्लोक लाया। किसी अन्य के पास क्यों नहीं ले गया। इसमें भी कोई न कोई भेद अवश्य है; परन्तु मुझको इस बात का पूरा-पूरा विश्वास था कि लिखने वाला मुझको नहीं जानता। यह केवल ईश्वरीय लीला है जिसने हंस को मुझ तक पहुँचा दिया।

मेरा बहुत सा समय इसी प्रकार के सोच विचार में व्यतीत हो गया। मैंने उस दिन और कुछ काम काज नहीं किये और न मन पुस्तकों के पढ़ने में लगा। जब सायंकाल हुई मैं वाटिका में समिधा चुनने के लिये गया; क्योंकि सन्ध्या के हवन के समय उनकी आवश्यकता पड़ती है। अभी मैं लकड़ी चुन ही रहा था कि वही हंस उड़ता हुआ फिर मेरे निकट आया। उसकी चोंच में पहले की भांति फिर वैसा ही कंवल का पत्ता था। मैंने उसको ले लिया और पढ़ने लगा। उसका भाव यह था :—

तेरा निशां कहाँ है, ऐ बे निशान वाले।
तेरा मकाँ किधर है, ऐ ला मकान वाले॥
सुन पाँय नाम तेरा, गर पास तेरे आयें।
नामो निशाँ बतादे, ऐ ऊँची शान वाले॥

मैंने इनको पढ़ा। इनको पढ़कर फिर मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। मैंने पहिले की तरह फिर कंवल का पत्ता तोड़ा और नाखुन से श्लोक लिखकर भेज दिये।

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

हंस पत्ते को लेकर उड़ा। उसके पश्चात् फिर पास नहीं आया। मैंने कई दिनों तक उसकी प्रतीक्षा कुछ पता नहीं लगा कि क्यों नहीं आया। किसी ने उ में तीर से मार तो नहीं दिया। मेरे हृदय में नाना प्रकार के विचार उठ रहे थे। मैं जानना चाहता था कि श्लोकों का भेजने वाला कौन है। वह पुरुष है या स्त्री है और किस ध्येय से उसने हंस के द्वारा भेजने की विधि निकाली है। लोग मुझको बड़ा बुद्धिमान व अनुभवी समझते हैं। मैं रसायन शास्त्र न्याय
५ शास्त्र और अबाध गति व काया पलट विद्याओं का आविष्कारक कहलाता हूँ। वेद और शास्त्र मैंने अच्छी तरह पढ़े हैं। मगर मैं इस भेद को कदापि न जान सका। कई दिन हंस की प्रतीक्षा में व्यतीत हो गये मगर वह नहीं आया। मेरे चित्त की बेचैनी बढ़ती गई। मैं बड़ी द्विचिताई में रहता था। कोई बात समझ में नहीं आती थी। और धीरे-धीरे मेरी यह दशा हुई कि मैं सच्चे हृदय से हवन व सन्ध्या भी न कर सका।

जब कई दिन इसी दशा में गुज़रे, कई ऋषि मेरे आश्रम
२ में आये। कहने लगे कि गौतम ! यहाँ बैठे क्या कर रहे हो। चलो अहिल्या का स्वयम्बर होने वाला है। वहाँ बहुत से लोग एकत्रित होने वाले हैं। चलो तुमको भी तमाशा देखने का अवसर मिलेगा। मैंने कहा अहिल्या महा तेजस्वी और अति सुन्दर स्त्री है। इन्द्र आदि देवता उस पर मोहित रहते हैं। मेरा वहाँ जाना व्यर्थ है। ऋषियों ने कहा तुम्हारा विचार ठीक नहीं है। कौन जाने तुम्हारा विवाह अहिल्या से हो जाय। स्त्रियाँ केवल सुन्दरता ही पर मुग्ध नहीं होतीं। कौन जाने उनको क्या बात पसन्द आ जाती है और वह उसके अनुसार अपने लिये वर चुनती हैं। भाग्य का हाल कोई नहीं जानता। उसकी खबर ब्रह्मा को भी नहीं है। बहुधा रानियाँ साधुओं के

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

झोंपड़ों को राज भवन से अच्छा समझती हैं। प्रायः धनी घरानों की कन्यायें धनहीन पुरुष से विवाह करने पर तत्पर हो जाती हैं। चलो देर न करो। कौन जाने इस समय तुम्हारे भाग्य उदय हो जाँय।

मुझे भी यह मन्त्रणा भा गई। मैं उनके साथ स्वयम्बर के मण्डप में पहुँचा जहाँ आदमी व देवता खचाखच भरे हुये थे। कहीं भी तिल रखने की जगह नहीं थी। अहिल्या हाथ में जयमाल लिये हुये सभा के बीच चक्कर लगा रही थी। मैंने उसको देखा। उसने मुझको देखा। मन में अनेक प्रकार के विचार उमड़ने लगे। इतने में वही हंस जो मेरे आश्रम में आया करता था, परों को फड़फड़ाता हुआ मेरे निकट आया और अपना सर मेरे पाँव से रगड़ने लगा। उस समय मुझ को ज्ञात हुआ कि सम्भवतः यह अहिल्या ही का है। श्लोकों को लिखने वाली भी अहिल्या ही होगी। यह विचार करके मैंने दूसरी बार दृष्टि उठाई। ब्रह्मा ने अहिल्या के कान में झुक कर कुछ कहा और वह उसी समय हार लिये हुये मेरी ओर चली और मुस्कराती हुई मुझको हार पहना दिया। इस प्रकार मेरा विवाह उसके साथ हो गया।

अहिल्या को लेकर मैं अपने आश्रम में आया और वहाँ सुखपूर्वक रहने लगा। अहिल्या वास्तव में बड़ी नेक व साधु स्त्री थी। मेरे साथ उसको बड़ा प्रेम था। मैंने उसको धर्म का उपदेश सुनाया। नेति का मार्ग दिखाया और जिस उपाय से ईश्वर की प्राप्ति होती है वह सब सिखाये। वह भी बहुत प्रसन्न थी। सदा अपने भाग्य को सराहा करती थी। मैंने समझा अच्छी जोड़ी मिली है। जीवन आनन्द कुशल से कट जायगा। मगर अफ़सोस! यह जीवन भी कुछ विचित्र रूप से बनाया गया है। इसके गुलाब में काँटा है। इसके मधु में डंस है।

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

इसके मिलाप में वियोग है। इसके सुख में दुख है बात का ठिकाना नहीं। कोई नहीं कह सकता कि दम में क्या हो जायगा। बहुधा मनुष्य निश्चिन्त हो रहते हैं। इनको किसी ओर से किसी हानि का भय तो रहता नहीं; किन्तु यकायक आशा के विरुद्ध कुछ ऐसी बलायें आने लगती हैं कि वह हैरान रह जाते हैं।

अहिल्या के साथ मेरा विवाह होने से सबको प्रसन्नता हुई किन्तु इन्द्र के हृदय में ईर्षा का काँटा चुभने लगा। उसने चाहा कि किसी प्रकार अहिल्या के पतिव्रत धर्म को भंग कर दे और वह रात दिन इसी चिन्ता में रहा करता था। मुझे क्या ज्ञात था कि इन्द्र के हृदय में इस प्रकार की भावनायें उठ रही हैं। मैं इस ओर नितान्त बेसुधि था। एक दिन मैं किसी काम से बाहर चला गया। इन्द्र ताक में लग रहा था। मेरा रूप बनाकर अहिल्या के पास आया और उसके स्त्री व्रत को भंग कर दिया। इतने में मैं वापस आया। मेरी दृष्टि इन्द्र पर पड़ी। वह थर-थर काँप रहा था। मैं उसके कपट भाव को समझ गया था। पास ही अहिल्या भी भय से नीचे सिर किये हुये खड़ी थी। मैंने इन्द्र को श्राप दिया कि जा तेरे शरीर में सहस्रों छिद्र हो जावें और अहिल्या को यह श्राप दिया कि तू जा पत्थर की तरह पड़ी रहे। वह कहने लगी कि मैं निरपराध हूँ। मेरे अपराध को क्षमा करो। मैंने कहा चाहे ब्रह्माण्ड पलट जाय मगर मेरी बात पलटने वाली नहीं है। अब तो तुझको पत्थर बनकर पड़ा रहना होगा। जब त्रेता में राम का अवतार होगा फिर तू जीवित होगी और मुझको प्राप्त होगी।

इन्द्र तो डर कर भाग गया और अहिल्या पत्थर की चट्टान बनकर वहीं गिर पड़ी। मेरे हृदय को जो कुछ दुख हुआ वह वर्णन से बाहर है। मेरा आश्रम पहले मिथला देश के एक

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

बन में था उसके पश्चात् प्रयाग में आया और अहिल्या वियोग के पीछे मैं हिमालय के एक बन में आकर तप कर लगा। तप में बहुत समय व्यतीत हो गया। हृदय में जीव की ओर से कठिन बैराग उत्पन्न होगया। मेरे साथ कनायन व बिनाली दो शिष्य रहा करते थे। यही मेरी सेवा किया करते थे और मैं इनको पढ़ाया करता था; मगर मुझको उन दिनों तप का कुछ ऐसा ध्यान हो गया था कि रात व दिन समाधिस्थ रहा करता था। तन व बदन की कुछ भी सुधि नहीं थी। इस दशा में कितने वर्ष व्यतीत हो गये मुझको स्मरण नहीं।

इतने में अयोध्या में श्री रामचन्द्र जी प्रगट हुये। वह विश्वामित्र ऋषि के साथ मिथला देश को आये; क्योंकि राजा जनक की लड़की सीता का स्वयम्बर होने वाला था। मार्ग में जब वह मेरे आश्रम से होकर चले तो राम की दृष्टि पत्थर की शिला पर पड़ी। विश्वामित्र से पूछा, "यह पत्थर की शिला कैसी है ?" उन्होंने राम को वह सारी बातें सुना दीं जो मैं तुमसे अभी वर्णन कर चुका हूँ। राम ने अपना पाँव उस शिला से लगा दिया। अहिल्या पुनर्जीवित होगई और राम की स्तुति गाने और धन्यवाद देने के पश्चात हमारी खोज में हिमालय की ओर आई। मैं उससे मिला। हृदय में बहुत प्रसन्न हुआ और फिर उसी सुख चैन से जीवन व्यतीत करने लगा।

ऐ ऋषियो ! वियोग से पहले अहिल्या के पेट से दो लड़के और एक लड़की उत्पन्न हुये थे। पुत्रों के नाम शतानन्द व चरकारी थे व पुत्री अञ्जनी कहलाती थी जिसके पुत्र हनुमान से तुम लोग परिचित हो। यह लड़का रामचन्द्र की सेना का सेनापति था और शतानन्द जनक का पुरोहित था।

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

जब गौतम ऋषि चुप हुये अत्रेय ऋषि ने कहा कि यह सब ठीक है लेकिन तुम अहिल्या किसको कहते हं से तुम्हारा क्या अभिप्राय है और राम के पाँव छु अहिल्या के पुनर्जीवित होने से क्या अभिप्राय है ?

गौतम जी बोले। "अहिल्या बुद्धि है जिसके बिना कोई काम नहीं हो सकता। यही बुद्धि जिस समय गौतम रूपी आत्मा के साथ रहती है तो शतानन्द उत्पन्न होते हैं। जब तक बुद्धि अपनी निज अवस्था में रहती है तब तक कोई बुराई नहीं होती। लेकिन मन बड़ा उत्पाती है यह किसी न किसी तरह से उसको अधोगामी बना देता है। यह मन ही इन्द्र है और इसके वेग की शक्ति इन्द्र वज्र है। इसकी शक्ति को छिन्न-भिन्न कर देना इसके शरीर के सहस्रों छिद्रों से अभिप्राय है। यह मन बुद्धि से नीचा है लेकिन अपनी युक्ति से बुद्धि पर अधिकार पाने का प्रयत्न किया करता है। जब आत्मा को इसका छल ज्ञात हो जाता है वह इसको निर्बल बना देता है। बुद्धि की ओर आकर्षित नहीं होता। बुद्धि जड़ रूप बन कर पड़ी रहती है यह पत्थर की शिला का अर्थ है।

सतयुग में बुद्धि प्रगट हुई। फिर उसका वियोग हो गया। त्रेता में जब राम रूपी चेतन की धार ने उसकी ओर रुझान किया, वह फिर जीवित हो गई और गौतम से मिल रही। यह इस कथा का स्पष्टीकरण है। इससे और अधिक क्या कहा जाय। अब मैं चुप होता हूँ।" अब यमदग्नि ऋषि अपनी कथा सुनावें।

—: ० :—

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

(४) यमदग्नि ऋषि की कथा

अन्तिम कथा के पश्चात् ऋषियों में एक प्रकार का स[illegible] छा गया। सब थोड़ी देर के लिये चुप हो गये और कथा के गूढ़ आशय पर सोचने लगे। कश्यप ऋषि ने कहा, "सोचने के लिये फिर भी समय मिलेगा। अच्छा है अब महाराज यमदग्नि जी अपनी कथा सुनावें।"

यमदग्नि जी बोले:—

ऋषियो! अब तक जो कथायें हुई हैं चाहे विषयों की दृष्टि से उनको आप कुछ कहलो, किन्तु वास्तव में सबका आशय एक है। आप मुझसे कहते हो कि अपनी कथा सुनाओ। मैं अपनी कथा क्या सुनाऊँ। मेरे जीवन की घटनायें अति दर्द भरी व आँसू बहाने वाली हैं। आप उनको सुनकर दुःखी होगे। बुद्धिमानों का वचन है जब तक हो सके किसी को अपने दुःख से दुःखी न करो। हर व्यक्ति तत्परता और धैर्य के साथ अपना बोझ आप उठावे। जो सर पर आन पड़े उसको सहन करे। दुनिया में सबको किसी न किसी प्रकार का दुःख है। लोग अपने ही दुःखों से छुटकारा नहीं पाते। दूसरों की आपत्तियों के सुनने की उनको परवा कब है। इसलिये भाइयो! मेरा तो सदा से यही नियम रहा है कि अगर कोई प्रसन्नता की बात है तो मैं उसमें तो हर एक को सम्मिलित कर लिया करता हूँ; लेकिन दुःख के सम्बन्ध में न तो किसी को अपनी सहानुभूति करने देता हूँ न किसी को अपना दुःख सुनाकर व्यर्थ दुःखी करता हूं।

औरों ने अपनी-अपनी बीती कह सुनाई। आप ने कहा कि अब तुम्हारी बारी है। मैं असमंजस में हूँ कि क्या करूँ।

क्या न करूँ। एक तो अपने दुःख और कष्ट के वृता ध्यान दूसरे आपकी आज्ञा का विचार। बहुत अच्छा चिन्ता नहीं। सुनिये अब आप लोगों की इच्छा ही ऐ फिर सुनिये, मगर कथा है दुःख प्रद।

नालये बुलबुले शैदा तू सुना हंस हंसकर।
अब जिगर थाम कर बैठो मेरी बारी आई॥

महात्माओ! मैं एक निरपराध तथा अहिंसक ऋषि हूँ। पूजा पाठ, कर्म और यज्ञ हवन के अतिरिक्त मुझको कभी किसी और काम से सम्बन्ध नहीं था। आश्रम में अतिथि आया करते थे। आश्रम वाले का धर्म हो जाता है कि आने जाने वालों को लाभ पहुँचावें। यदि किसी का घर न होवे तो कोई क्यों किसी के पास आने जाने का कष्ट उठावे। मैं भी इस नियम को कड़ाई से मानने वाला था और मेरी स्त्री रेनुका और चार पुत्र मेरे 'विशु' और 'परशु' आदि इस कार्य में मेरी सहायता करते थे। मुझको इन्हीं विश्वामित्र जी की बहन व्याही थी जो इस समय आपके सम्मुख यहाँ विराजमान हैं। यह पहले ही से मेरे संबन्धी हैं और इसलिये इनके साथ मुझको सदा से एक प्रकार की विशेषता का हक़ प्राप्त है।

एक बार का प्रसंग है कि रेनुका ने बहुत दिनों से अपनी बहन को नहीं देखा था। उसकी एक बहन सूर्य्यवंशी राजा सहस्रार्जुन को व्याही थी। यह चक्रवर्ती राजा था। इस राजा में और उसकी सन्तान में यह बहुत बड़ी त्रुटि थी कि वह अपने शासन के घमंड में हर एक व्यक्ति को सताया करते थे रेनुका ने मुझको कहा कि बहुत दिनों से मैंने अपनी बहिन को नहीं देखा है। वह अनूप देश के राजा को व्याही है। मैंने कहा तू इस विचार को अपने हृदय से निकाल दे। राजा व साधु में परस्पर सम्बन्ध ही क्या है; लेकिन बहन की बहन को

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

कुछ ममता होती है। यह विचार उसके हृदय से दूर न
हुआ। अन्ततः उसकी अपनी मानसिक धारों के कारण
एक दिन सहस्रार्जुन अपनी सेना के साथ मेरे यहाँ आ
गया। मैंने यथाशक्ति उसकी सेवा की। मैं निर्धन साधू था लेकिन वशिष्ठ की तरह मुझको भी कामधेनु गाय मिली हुई थी। यह किसी समय इन्द्र ने मुझको दे दी थी। मैंने इसी कामधेनु की सहायता से क्षण भर में राजा के अतिथि-सत्कार की सम्पूर्ण सामग्री एकत्रित कर ली और आतिथ्य का कर्तव्य भली भांति पालन किया।

जिस तरह विश्वामित्र ने वशिष्ठ से प्रश्न किया था वैसे ही आश्चर्य व अचंभे के स्वर में सहस्रार्जुन ने भी मुझसे पूछा। जो उत्तर वशिष्ठ ने दिया था वही मैंने भी उसको दिया। विश्वामित्र की तरह उसके भी मुँह में पानी भर आया। मुझसे कहने लगा कि अपनी कामधेनु गाय किसी न किसी प्रकार मुझे दे दीजिये। इन क्षत्रियों की विचित्र अवस्था है। करना धरना कुछ भी नहीं, यों ही भुज बल से सब कुछ प्राप्त करना चाहते हैं। बहुत से स्थानों पर मनुष्य का बल नहीं चलता और कहीं चल भी गया तो उसका परिणाम बहुत हृदय विदारक होता है। तुमको वशिष्ठ ने बता दिया है कि कामधेनु गाय क्या वस्तु होती है इसलिये मैं दोबारा उसको नहीं बतलाऊँगा। राजा ने कठोरता की। बलात् कामधेनु गाय को ले गया। यदि मैं चाहता तो कामधेनु गाय से राजा पर विजयी हो जाता। वह बिचारी बार-बार मेरी ओर देखती थी, मगर मैंने पहले ही आपको बता दिया है कि मैं बिलकुल निरपराध साधु हूँ। मैंने उससे कुछ नहीं कहा। राजा उसको घसीट ले गया। यह समाचार कहीं मेरे लड़के परशुराम को मिल गया। वह अपने आश्रम में तप कर रहा था। फरसा लेकर उठ खड़ा हुआ और

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

धाबा मारकर सहस्रार्जुन की राजधानी महेशपति
जा पहुँचा। क्षत्री को ललकारा। हत्यारे! यह
किया! क्या कोई किसी साधु को कभी दुःख देता
समझ लिया कि राजा के सम्मुख किसी को लड़ने की शक्ति नहीं है। यह तेरा विचार अनुचित है। जिसमें ब्रह्म का तेज है उसका सामना कौन कर सकता है। मेरा पिता सीधा सादा है उसने अतिथि सत्कार का कर्तव्य पालन किया। उसका बदला तूने यह दिया कि उसकी कामधेनु गाय को बलात् छीन लाया। लुटेरे डाकू! तुमको संसार राजा कहे, मैं राजा नहीं कहता। अगर तू क्षत्री है तो आजा मुझसे लड़ाई कर। ऋषियो! परशुराम की ललकार को सुनकर सहस्रार्जुन और उसके लड़के सामने आये। वह अकेला था। राजा के पास बहुत कुछ सेना थी। उसे किंचित लड़ने की रुचि न होती; किन्तु परशुराम ने उसको बुरी तरह से चैलेन्ज दिया था। क्षत्री ऐसे समय में पीठ नहीं दिखाते। यह क्षत्रियों का धर्म है कि मैदान से कभी न हटें। "प्राण जांय पर परण न जाई"।

लड़ाई प्रारम्भ हुई। परशुराम ने सहस्रार्जुन के बहुत से हाथ काट दिये और ९०० पुत्रों को मार डाला। नगर को आग लगा दी और सबको दिखा दिया कि ब्रह्म तेज राज तेज से अधिक बलवान है। वह कामधेनु को लेकर मेरे पास चला आया। मैंने उससे कहा कि बेटे! तूने सब कुछ अच्छा किया किन्तु चक्रवर्ती राजा को व्यर्थ मार दिया। राजा के मारने की आज्ञा शास्त्र नहीं देते। इसका बहुत बड़ा पाप होता है। तू मेरी आज्ञा मान ले। जा प्रायश्चित के निमित्त तीर्थ यात्रा कर जिससे यह कलंक दूर हो और पाप से छुटकारा मिले। परशुराम मेरा सबसे अधिक सुशील व आज्ञाकारी पुत्र है। मेरी आज्ञा को उसी समय उसने मान लिया और तीर्थ यात्रा

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

करने के विचार से उसी समय आश्रम से बाहर चला गया यह मेरे जीवन की एक घटना है जो बहुत दर्द भरी है। मैं जिस प्रकार अपनी विवशता तथा राजा की निराश्रयता व महसूस किया और इस परशुराम के काम पर जो दुख हुआ उसका आप से कुछ वर्णन नहीं कर सकता हूँ। आप समझिये कि अच्छे मनुष्यों से प्रायः ऐसे-ऐसे काम हो जाते हैं जो करने योग्य नहीं होते; किन्तु कर्म का सिलसिला बहुत प्रबल है। कोई नहीं कह सकता कब क्या हो जायगा। इसलिये अब इसका वर्णन यहाँ ही छोड़ता हूँ और अपने जीवन की दूसरी घटना सुनाता हूँ।

मैंने आपसे कदाचित यह नहीं कहा कि मेरा आश्रम ठीक गंगा के किनारे है। घड़ों में पानी नहीं था। मैंने रेनुका से कहा कि प्रिये! जल नहीं है। गंगा से भर लाओ। वह गई और जब जल भरने लगी संयोगवश उस समय चित्रकेतु गन्धर्व राजा अपनी स्त्री को लिये हुये क्रीड़ा कर रहा था। रेनुका गो सती व पतिव्रता स्त्री थी उसका मन चलायमान हो गया। देर तक उनके तमाशे को देखती रही। घंटों तक वहाँ ही खड़ी रही। अन्त में जब वह घड़ा लेकर वापस आई, मैंने पूछा—"इस देर का क्या कारण है?" वह चुप रही। जिह्वा तक न हिलाई। आखिर मैंने स्वयम् ही समाहित चित्त होकर देखा। रेनुका के विचार आकाश मंडल में फिर रहे थे। उनमें काम व इन्द्रिय भोग विलास के भाव के रंग थे। मुझको बड़ा आश्चर्य हुआ। ऋषि पत्नी और इस प्रकार दूसरे स्त्री पुरुष की क्रीड़ा के तमाशे को देखे। क्रोध आगया और मैंने अपने लड़कों से कहा, "इस स्त्री का सर अभी काट लो"। दो लड़कों ने हाथ बाँध कर प्रार्थना की, "माता का मारना अधर्म है। पुत्र पर आचार्य्य का दस गुना, बाप का सौ गुना किन्तु माता का

हज़ार गुना अधिकार है। यह काम हम से कभी न ह
हम मां पर कैसे हाथ उठावें ? संसार हमको क्या क
आप स्वयम् इस समय क्रोध में हैं थोड़ी देर पीछे जब क्रोध
हो जायगा, हमको स्वयम् बुरा भला कहने लगेंगे। चाहे कुछ ही क्यों न हो जाय हम अपनी माता को कभी न मारेंगे। ऐसा कभी न होगा। आप हमको मार डालें अथवा श्राप दें; किन्तु हमसे यह न होगा कि माता जी का सर काट लें।" रेनुका खड़ी हुई थर-थर कांप रही थी। मेरे क्रोध की अग्नि बुरी तरह भड़क रही थी। उसी समय परशुराम तीर्थ यात्रा से वापस आया था। मैंने उसे बुलाकर कहा—"सचमुच तू ही आज्ञाकारी व सुशील पुत्र है। अपने फरसे को उठा। इन अनाज्ञाकारी लड़कों व मूर्ख स्त्री का सर अभी काट दे"। सज्जनो ! परशुराम ने तनिक भी देरी नहीं की। उसी समय उसका फरसा आकाश में चमका और उसके भाई और माता के सिर भूमि पर गेंद की तरह लुढ़कने लगे। रक्त की नदी बह निकली। मैंने बेटे की पीठ ठोंक दी। "वाह ! वाह !! शाबाश !!! क्या कहना है। मैं तेरे आज्ञा पालन से प्रसन्न हूँ। मांग, मांग क्या मांगता है ?" परशुराम ने हाथ जोड़ कर कहा—"पिताजी ! आपमें संजीवनी शक्ति है। उसके प्रताप से माता व भाइयों को जीवित कर दीजिये। आपकी आज्ञा का पालन हो गया। इनको अपने अपराधों का दण्ड मिल चुका। जहाँ प्रकृति में चीरा लगाया जाता है, वहाँ मरहम भी दिया जाता है। जहाँ माली पेड़ों की टहनियों को काटता है साथ ही खाद भी डालता है। आप मेरी प्रार्थना को सुनें और इनको जीवित करदें।" मैंने कहा; 'एवमस्तु ! बहुत अच्छा, ऐसा ही होगा' और वह उसी समय जीवित होगये। उस समय परशुराम की दशा कुछ न पूछो। माँ के पाँव पर गिरा और धाड़ें मारकर रोने लगा। भाइयों के साथ भी

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

उसकी यही दशा थी। माता से उसने कहा। लोग मातृ ऋण व पि ऋण से उत्तीर्ण होने का प्रयत्न करते हैं और मैं ऐसा अभागा हूँ कि माँ और भाइयों के मारने का अपराधी बना। रेनुका ने प्रे से परशुराम को अपनी छाती से लगा लिया। कहने लगी, पुत्र! इसमें तेरा तनिक भी अपराध नहीं है। ब्रह्मा ने जो कुछ लिख दिया है वैसा ही होता है। तूने पिता की आज्ञा मानी बहुत अच्छा किया। मैं भी तुझसे अति प्रसन्न हूं। वह पुत्र, पुत्र नहीं है जो पिता की आज्ञा नहीं मानता। ऐ पुत्र! ईश्वर को किसने देखा है? संसार में बाप ही ईश्वर है जिसने तुमको जन्म दिया था। उसके वचन को सच्चा कर दिखाया। तू धन्य है जो इस प्रकार पिता की आज्ञा का पालन करता है। और मैं धन्य हूँ जिसके कोख से तेरे ऐसा आज्ञाकारी पुत्र उत्पन्न हुआ। तू कुछ चिन्ता न कर। इस बात को बिल्कुल भूल जा कि तूने अपने माँ के मारने के लिये फरसा उठाया था। मैं तुझको सच्चे हृदय से आशीर्वाद देती हूँ, कि संसार में तुझको यश मिलेगा।"

महापुरुषो! मैं माँ बेटे की बातों को सुनकर काँप उठा। उनकी बातचीत में शिक्षा थी और रोमांच था, मगर मैं क्या करता जो होना था वह हो चुका था। इस तरह होना आवश्यक भी था। अन्त में मैंने सबको राजी किया और सब के खेद को दूर करना चाहा; मगर परशुराम ने कहा, "मैं अपराधी हूँ। मुझको माँ के मारने का पाप लगा है। मैं तीर्थ यात्रा को जाता हूँ। जब इसका प्रायश्चित हो लेगा तब फिर आश्रम में आऊँगा। बेचारा लड़का फिर दूसरी बार तीर्थ यात्रा के लिये घर से बाहर निकला। यह मेरे जीवन की दूसरी शिक्षा प्रद घटना है। कहिये, यह दर्द भरी है या नहीं। अब तीसरी घटना सुनिये।

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

परशुराम के तीर्थ यात्रा की सूचना पाकर सह बचे खुचे सौ लड़कों को बाप के खून का बदला लेने क उत्पन्न हुई। वह मुझको गाजर मूली समझते थे परशुराम से डरते थे। मैदान खाली था। जी में प्रसन्न हुए। क्षत्री जाति में इस तरह बदला लेने का गुण स्वाभाविक है। वह निडर होकर आश्रम में चले आये। मैं हवन कर रहा था। चारों ओर से चित्त वृत्ति हटी हुई थी। केवल मंत्र पढ़ने और आहुत देने का ध्यान था। क्षत्रियों ने अकस्मात मुझ पर वार कर दिया और मेरा सिर कट कर गिर गया। सारा कमरा रक्त से भर गया और हवन कुण्ड की अग्नि बुझ गई। क्षत्री तो मुझको मार कर चले गये। रेनुका ने मेरी दशा देखी। विलाप करने लगी। उसके दुख और व्याकुलता को देखकर पत्थर का हृदय भी पसीज गया।

उस समय उसने इक्कीस बार अपने हाथों से अपनी छाती पीटी और इक्कीस बार परशुराम को याद किया—"ऐ पुत्र ! तू आज यदि यहाँ होता तो ऋषि की यह दशा न होती। कदाचित् यदि तू आज आ जावे तो मैं तुझको आज्ञा दूँगी कि इस अपराध के दण्ड में तू इक्कीस बार क्षत्रियों को समूल नष्ट कर दे।" ऋषियो ! विचार में बहुत बड़ी शक्ति है। यह बिजली से अधिक तेज, वायु से अधिक शीघ्रगामी और आँधी से अधिक तीव्र गति वाला है। रेनुका के विचार की धारें परशुराम के हृदय से टकराईं। वह उसी दिन वापस आ गया। देखता क्या है कि मेरा सर धड़ से अलग पड़ा है और रेनुका बुरी तरह रो रही है। उसने सारा हाल पूछा। माँ से कहने लगा कि दुखी न हो। मैं बाप को अभी अपनी संजीवनी शक्ति से जीवित करता हूँ। चूँकि तूने उसके शोक में इक्कीस बार छाती पीटी है, इक्कीस ही बार पृथ्वी को क्षत्रियों से निर्मूल कर दूँगा।

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

परशुराम ने मुझको पुनर्जीवित किया और मुझे रेनुक सौंप करके क्षत्रियों के पीछे बुरी तरह पड़ा। लाखों को बार मिट्टी में मिला दिया। भागने से भी उन्हें छुटकारा मिला। जो सामने आया वह उसके फरसे के घाट उतारा गया। जो जान लेकर भागा वह तीरों का लक्ष्य बना। परशुराम ने क्षत्रियों को चुन-चुन कर मारा। एक भी क्षत्री राजवंश का संसार में नहीं छोड़ा। मुझको कहते हुये लज्जा आती है कि मैं ऐसा निरपराध और अहिंसक और मेरे कारण से संसार पर बार-बार ऐसी आपत्तियाँ आवें। कुछ कहा नहीं जाता संसार की गति विचित्र है। देश में अकाल पड़ गये। राज काज सब भ्रष्ट हो गये। शासन का अन्त हो गया, प्रजा दुखी हो गई। परशुराम ने चाहा कि ब्राह्मणों को भूमि और राज प्रदान किया जाय। उसने ऐसा प्रबन्ध भी किया, मगर इससे कुछ भी नहीं बना। यह मेरे जीवन की तीसरी घटना है, जो बड़ी रोमांचकारी और शिक्षाप्रद है। मैं इनको याद करना नहीं चाहता परन्तु आप लोगों की आज्ञा सर पर है। अब बतलाइये कि और भी अपने जीवन की घटनाएँ सुनाऊँ कि बस करूँ।

वशिष्ठ ने हँसकर कहा—यमदग्नि जी तुम्हारा वृतान्त मुझसे बहुत मिलता-जुलता है। हाँ, मैं क्षत्रिय कुल पालक हूं, तुम क्षत्रिय कुल घालक हो; केवल इतना ही अन्तर है। अब यह बताइये कि सहस्राजुर्न, रेनुका, परशुराम और क्षत्रिय कुल के इक्कीस बार नाश करने से आपका क्या अभिप्राय है जिससे समाज के सारे मनुष्य असलियत को समझ जाँय।

यमदग्नि बोले ! सहस्राजुर्न मनुष्य का मन है, जिसके सहस्र हाथ और सहस्र ही वंदिशें हैं। यह मन क्षण प्रति क्षण

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

खेल खिलाता रहता है। कभी राज करता है, कभी करता है। कभी लोक को सुधारना चाहता है और प ध्यान करता है। इसकी चाल निराली है। कभी सम कर बैठा, कभी आकाश पर चढ़ा और कभी समुद्र में डुबकी लगाई। इस मन को रेनुका की बहन ब्याही है। रेनुका आत्म वृत्ति को कहते हैं जो यमदग्नि रूपी आत्मा के साथ रहती है। इससे जो रजोगुण से मिली हुई सत की धार निकलती है वही मन को जाकर जीवित करती है। यदि यह न हो तो मन से कोई काम नहीं हो सकता है। जब बुद्धि इसे शक्ति देती है तो मन काम करने लगता है। यदि रेनुका ने अपनी बहन को याद न किया होता तो क्यों सहस्रार्जुन आता और मेरी कामधेनु गाय को छीन ले जाता। कामधेनु आत्म शक्ति है। यह मन के मान की नहीं है। मन हज़ार चित्त की वृत्ति रोक कर उसका वश में करना चाहे, किन्तु उसका हाथ आना फिर भी कठिन है। आत्मा केवल उन्हीं को मिलती है जो उसको प्यार करते हैं। सारांश यह कि ग़लती रेनुका रूपी आत्म-वृत्ति ने की जिसका यह दुष्परिणाम हुआ। कोई किसी पर विजयी नहीं हो सकता जब तक उसका सजातीय सहायता न करे। एक कथा तुमको सुनाता हूं। किसी बन में बहुत बड़ा वृक्ष था। एक लकड़हारे ने उसको देखा। कहने लगा इस वृक्ष को गिरा दूँ। इसकी लकड़ी खूब बिकेगी। जितने पक्षी बैठे थे डर गये और वृक्ष पर से उड़ना चाहा। वृक्ष ने कहा चिन्ता न करो। तुमको कोई उस समय तक हानि नहीं पहुँचा सकेगा, जब तक मेरे सजातीय उसका साथ नहीं देंगे। लकड़हारा प्रतिदिन आता था और इसी प्रकार की बात करता था। अन्त में एक दिन वह आया और वृक्ष की एक शाखा को हाथ लगाया। वह शाखा उसकी ओर झुक गई। तब वृक्ष ने

पक्षियों से कहा अब तुम सब लोग यहाँ से उड़ जाओ। अ
कुशल नहीं है। यह झुकी हुई मेरी शाखा लकड़हारे से मि
गई और वह सारे वृक्ष को गिरवा देगी। पक्षियों ने इस बा
को नहीं समझा। आखिर लकड़हारे ने वृक्ष की वह शाखा तोड़ ली उससे अपने कुल्हाड़े का बेंटा बनाया और उसी से सारे वृक्ष को काट कर गिरा दिया।

इसी प्रकार ऐ ऋषियो! जब आत्म वृत्ति किसी प्रकार मन की ओर झुकती है तब उत्पात मच जाता है। यदि मन पर आत्मवृत्ति विजयी रहे और सिवाय आत्म दृश्य के कुछ न देखे तो कोई कष्ट न हो। परशुराम इसी आत्मवृत्ति का राजसी वृत्ति वाला परम पुरुषार्थ रूपी पुत्र है। इसमें आत्म बल होता है और जब यह मन की ओर झुकता है तो क्षण भर में सहस्रों हाथ वाले मन का अन्त कर देता है। मन में इतनी शक्ति नहीं कि उसके सामने ठहर सके। मगर आप जानते हैं कि यह मन शरीर का राजा है। इसको कभी मारना नहीं चाहिये। इसको केवल अपने वश में लाना चाहिये। काम, क्रोध, लोभ आदि इसके सहस्रों पुत्र हैं। इनको भी मारना बड़ी भारी ग़लती है। अर्थ केवल इतना है कि इनका सुधार करके इनकी प्रवृत्ति आत्मा की ओर बदल दें। जो मन को मारते हैं वह अपराधी होते हैं। जब मन ही न रहा तो शरीर का राज्य नष्ट हो जाता है। किसी प्रकार इसका प्रबन्ध नहीं हो सकता। ऐ, वशिष्ठ! आपके प्रश्न के एक भाग का उत्तर मैंने दे दिया। अब और सुनोः—

मन को मृतक देखकर, मतमाने विश्वास।
साधु वहाँ लगि भय करें, जहां लग पिंजर श्वास।
मैं जानूं मन मर गया, मरकर हुआ वह भूत।
मूये पीछे उठ लगा, ऐसा मेरा पूत॥

मन रूपी सहस्रार्जुन मर गया मगर अभी उसव
शेष बच गई थी। उसने उत्पात मचाना चाहा और
रूपी आत्मा पर आक्रमण करके उसका सर काट दि
काटने से अभिप्राय यह है कि सब के सब, मन बुद्धि अहंकार आदि आत्मा के विरोधी हो गये और अपने आप नाच नाचने लगे। उस समय रेनुका रूपी आत्म वृत्ति ने २१ बार छाती कूटी और परशुराम ने २१ बार क्षत्रियों का नाश किया।

वशिष्ठ ने कहा, यह क्षत्री कौन है ? और परशुराम ने २१ ही बार क्यों इनका नाश किया ? २० या २४ बार क्यों नहीं नाश किया ? यमदग्नि बोले, मन के समस्त राजसी भावों का नाम क्षत्री है क्योंकि मन सतोगुण रूपी प्रकाश का स्वभाव रखता हुआ अपनी चित्त शक्ति के कारण से रजोगुणी है, इसलिये उनको क्षत्री कहा गया है। क्षत्री शब्द से यहाँ कोई अभिप्राय नहीं है। आपने यह प्रश्न किया है कि परशुराम ने २१ ही बार क्यों उनका नाश किया। इसका कारण यह है कि सूक्ष्म तत्व सात हैं—बुद्धि, अहंकार और पंच तन मात्रा। यह सात मन की जड़ हैं। इसकी जड़ इनमें है। इन सातों में से हर एक सत, रज व तम् के सम्बन्ध से मन तीन रूपों वाला है। अगर तीन को सात से गुणा कर दें तो २१ होते हैं। अतएव यह कहा गया है कि परशुराम ने २१ बार इनकी जड़ खोदी है।

इतना कह कर यमदग्नि चुप हो गये। उनके मुख से ज्ञात होता था। कि अब वह कुछ नहीं कहना चाहते मगर वशिष्ठ ने कहा कि महाराज! अभी एक बात और रह गई है। गंगा क्या है ? जल क्या है ? चित्रकेतु गन्धर्व की जल क्रीड़ा से क्या प्रयोजन है और रेनुका के सर काटने से आपका क्या मन्तव्य है ? आपने अभी बताया है कि रेनुका आत्म वृत्ति का नाम

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

है। कोई ज्ञानी इस बात को नहीं पसन्द करेगा कि आत्म वृ[illegible] अथवा आत्माकार वृत्ति का सर काटा जाय।

यमदग्नि ने उत्तर दिया। आत्म वृत्ति और वस्तु है आत[illegible] और वस्तु है। इसको आप ध्यान में रखें। सृष्टि पुरुष व प्रकृति के खेल का तमाशा है। इस मेल में जो क्षोभ होता है उसी को वृत्ति बोलते हैं। गंगा सृष्टि के प्रवाह की धारें इसमें जलरूप हैं। चित्रकेतु गन्धर्व वह नाना प्रकार के संस्कारों के नक्शे हैं जो मन व बुद्धि में खिंचे हुये पड़े रहते हैं। जिस समय आत्म वृत्ति सृष्टि के प्रवाह का तमाशा देखने लगी, संयोग वश काम भावना, जिसके नक़्शे मस्तिष्क में खिंचे हुये थे, फुरने लगे और वह उस ओर आकर्षित होगई। आत्मवृति को इन सब बातों से क्या काम है। इसलिये परशुराम के फरसे ने उसका सिर काट दिया। सिर काटने का अर्थ केवल वृत्ति के पलटने से है और कुछ नहीं।

जब यमदग्नि ऋषि यहाँ तक पहुँचे उनको इच्छा हुई कि वह अपनी एक एक बात को साफ़ साफ़ प्रगट करदें परन्तु वशिष्ठ ने कहा कि इसकी बिल्कुल आवश्यकता नहीं। इस मंडली में अध्यात्म बातों के समझने वाले सब लोग हैं। वह इन अलंकारों को समझ सकते हैं। अब अत्रेय ऋषि को अपनी कथा सुनाने दीजिये।

—:❀:—

(५) अत्रेय ऋषि की कथा

अब सबकी दृष्टि अत्रेय ऋषि की ओर गई। इनके समाचार सुनने की सबको इच्छा हुई। अत्रेय ऋषि बोलेः—

श्रोतागण! कर्दम ऋषि की पुत्री अनुसुइया से मेरा विवाह हुआ था। आपको विदित होना चाहिये कि कर्दम ऋषि की

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

स्त्री का नाम देवहुति था। इस देवी के पेट से म
कपिल जी का जन्म हुआ था। देव हुति बड़ी सयानी
उसने कपिल व अनुसुइया दोनों का बड़ी योग्यता
पालन पोषण किया। कपिल तो सांख्य शास्त्र के रचयिता हुये और जहाँ तक मुझको ज्ञात है उन्होंने विवाह नहीं किया। महासागर के निकट आश्रम बनाकर रहे और वहाँ ही रह कर हजारों लाखों व करोड़ों प्राणियों का उपकार किया। मगर अनुसुइया ने मेरे साथ विवाह किया और मैं उसको लेकर अपने आश्रम में चला आया। मैं ठीक उसी प्रकार अपना जीवन निर्वाह करने लगा, जैसे शिव पार्वती के साथ अपना समय व्यतीत करते हैं। इस बात की कदाचित बताने की आवश्यकता नहीं है कि मैं बहुत प्रसन्न था। मुझको जीवन में किसी भी प्रकार का असमंजस नहीं था। यह सब मेरी स्त्री अनुसुइया का पुण्य प्रताप था। वह सच्चे हृदय से मेरी सेवा किया करती थी। मुझको उसके रहते हुये न तो कभी किसी बात की आवश्यकता प्रतीत हुई न मैंने दुख अनुभव किया। मेरा समाचार गौतम आदि की कथा के विरुद्ध है। मैं चाहे कहने के लिये साधु था मगर जो सुख आनन्द मुझको प्राप्त था वह कदाचित कठिनता से किसी राजा को भी मिला होगा। आप जानते हैं बल, स्त्री व सुन्दरता यह तीनों भाग्य से प्राप्त होते हैं। मैं यथार्थतः अनुसुइया को पाकर अपने आपको बड़ा भाग्यशाली समझता था। यदि किसी की स्त्री अच्छी है तो समझ लो वह दीन व दुनिया में राजा है। यदि किसी की स्त्री अच्छी नहीं है तो उसको यह संसार जीते जी नर्क धाम बन जाता है।

जो लोग यह कहते हैं कि स्त्री बन्धन की कारण है वह शायद ग़लती पर हैं। इन्होंने स्त्री के रूप को नहीं समझा और

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

न उनको अपने ही रूप का ज्ञान हुआ। स्त्री न अच्छी है बुरी है। मनुष्य जैसा अपना भाग्य बना ले वैसे ही वैसे उ को स्त्री मिलती है। मनुष्य आप अपने भाग्य का बना वाला और बिगाड़ने वाला है। जैसा शरीर होगा वैसी ही उसकी छाया होगी। स्त्री वास्तव में पुरुष की छाया है। इससे अधिक उसकी स्थिति नहीं है। स्त्री अन्न देती है वह अन्न दाता है। स्त्री बल देती है वह बल दाता है। स्त्री बुद्धि देती है वह बुद्धि दाता है। सरस्वती, दुर्गा, लक्ष्मी यह स्त्री के रूप हैं। यह भोग व मोक्ष दोनों की दाता है। यह पुरुष की प्रबल शक्ति है। यदि यह न हो तो जीना अकार्थ है। जिसके स्त्री नहीं वह जीते जी मृतक है। उसका संसार में आना निष्फल है। न किसी ने उसके आने को जाना और जब वह चला जायगा न कोई उसको जानेगा और न उसके नाम पर आँसू बहायेगा। लोक परलोक का व्यवहार स्त्री की देह से होता है। भलाई बुराई सब की जड़ स्त्री है। यह न हो तो कुछ भी नहीं, क्यों कोई व्यवहार करे ? क्यों किसी प्रकार के काम का ध्यान आवे ? भाई ! मैं तो स्त्री को ऐसा ही समझता हूँ। तुम लोग जो चाहे वह समझो। शिव जी के मुखारबिन्द से मैंने ऐसा ही सुन रखा है और शिव जी कोई बात ग़लत नहीं कहते।

अस्तु ! जब मैं अनुसुइया को लेकर आश्रम में आया बहुत ही प्रसन्न हुआ। मेरा आश्रम जो चित्रकूट में है स्वर्गधाम बन गया। चारों ओर आनन्द व हर्ष के दृश्य दिखाई देने लगे। आश्रम के किनारे उसने बेल बूटे लगाये। गाय, मोर, हिरन बहुतायत से पाले। प्रत्येक वस्तु यथोचित रूप से सुसज्जित रहती थी। जिसको जहाँ होना चाहिये वह वहाँ ही रखी जाती थी। (शेष फिर)

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

प्रातः हुई। बेचारी उठी। हवन कुण्ड को सा सामिग्री व समिधा लाकर रख दी। मुझको धुलाया और हाथ जोड़कर कहा, "भगवन् ! यह समय है।" हम दोनों ऋषि यज्ञ में सम्मिलित होकर आहुति देने लगे और परमात्मा का गुणानुवाद गाया। इधर मैं तो शिष्यों के पढ़ाने में संलग्न हुआ उधर उसने फल फूल दूध अन्न आदि तय्यार किये और फिर हाथ जोड़ कर कहा, "प्रभो ! यह भोजन का समय है" और मैंने विद्यार्थियों के साथ भोजन पा लिया। फिर अनुसुइया ने वेद की ऋचायें पढ़कर सुनाईं और फिर अवकाश पाकर घर के काम काज में लगी। मैंने शिष्यों की ओर ध्यान दिया। अभी सूर्यास्त भी नहीं होने पाया था कि उसने फिर मुझको सन्ध्या की याद दिलाई। "प्राण पति ! सन्ध्या का समय होगया" और फिर नहा धोकर हम दोनों स्त्री पुरुष ने बैठकर सन्ध्या की और खाना खाकर कथा पुराण सुनने सुनाने के पश्चात् चुपके से उठकर सो रहे, यह नित्यप्रति का नियम था। जो कोई आश्रम में आता अनुसुइया का शिष्टाचार व व्यवहार देखकर मोहित हो जाता और मेरे सौभाग्य की सराहना करता। अतिथि सत्कार इस सुन्दर ढंग से किया जाता था कि ऐसा बहुत कम पाया जाता होगा। हम प्रतिदिन पंच यज्ञ किया करते थे और अनुसुइया की योग्यता ने मुझको इस योग्य बना दिया था कि मुझसे नित्य नियमानुसार कर्म में कभी त्रुटि नहीं हुई। मैं कैसे कहूँ कि स्त्री दुखदाई होती है। मेरा अपना निज अनुभव और प्रकार का है। मैं स्त्री में कोई दोष नहीं देखता। जो कुछ स्त्री में दोष होगा उसमें भी अपराध पुरुष ही का होगा।

नारी निन्दा ना करो, नारी नर की खान।
नारी से नर होत हैं, ध्रुव प्रहलाद समान॥

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

अनुसुइया बड़ी लज्जावती थी। मैंने किसी प्रकार लिया कि इसको पुत्र व सन्तान की इच्छा है क्योंकि कं ऐसी नहीं होती जो पुत्र की इच्छा न रखती हो। मैं लगा कि क्या करूँ। इतने में ब्रह्मा, विष्णु व महेश मुझसे मिले। कहने लगे कि ऋषि! चिन्ता न करो, हम तीनों के अंश तुम्हारे घर पर पैदा होंगे और हमारे कारण तुमको यश मिलेगा। हमने अपने कपट भाव से अनुसुइया जी की जाँच व परख करली है। वह बड़ी नेक, धर्मात्मा व पतिव्रता स्त्री हैं। स्त्री जाति की भूषण! हम इसको अपनी माता के समान समझते हैं। संसार में इसकी अमर कीर्ति का गीत बहुत दिनों तक लोग गाया करेंगे। मैं अपने जी में बड़ा प्रसन्न हुआ मगर हाथ जोड़कर कहने लगा। प्रभो! तुम दीन दयाल हो कि जो मुझ पर ऐसी कृपा करना चाहते हो। तुम धन्य हो!

जब कुछ समय व्यतीत होगया अनुसुइया के गर्भ से तीन पुत्र उत्पन्न हुये। दत्तात्रेय, दुर्वासा व चन्द्र। यह तीनों अपने-अपने ढंग पर बड़े पराक्रमी हुये और तीनों त्रिकाल दर्शी, ज्ञानी व तेजस्वी थे। दत्तात्रेय विष्णु के, दुर्वासा महादेव के व चन्द्र ब्रह्मा के अवतार थे और तीनों में तीन देवताओं के गुण प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर होते थे। इनको देखकर मुझको ध्यान आया कि जो कुछ देवताओं ने कहा था वैसा ही प्रादुर्भाव हुआ है।

'वृथा न होय देव ऋषि वाणी'

और अनुसुइया ने इन तीनों को उनकी प्रकृति व स्वभाव के अनुसार शिक्षा दी। मैंने एक दिन उनसे कहा कि इन लड़कों को शिक्षा तू पृथक-पृथक क्यों देती है। वह बोली कि प्राण पते! जिसका जैसा संस्कार हो, जैसी प्रकृति हो व जैसा स्वभाव हो वैसी ही शिक्षा देनी चाहिये नहीं तो बड़ी हानि होती है। आप आचार्य ऋषि तथा वेदों के जानने वाले हो। जब समय

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

आवेगा आप अपने ढंग पर उनको जो चाहो सिखा
अभी तो मैं उनकी आचार्य, गुरू हूँ। बचपन में
बच्चों की अधिष्ठाता है। मैं इनकी शिक्षा की नींव
डाल रही हूं। आप उस पर अपने प्रकृति के अनुसार भवन खड़ा कर लेना। मैं अनुसुइया की सादगी पर हंसने लगा और कहा कि अच्छा! तुम्हारे लड़के हैं जैसा चाहो वैसा करो।

यह तीनों लड़के बड़े हुये। अनुसुइया ने कहा कि अब इनकी आयु पांच वर्ष की हो गई। तुम प्रतिबन्ध का संस्कार करके इनको अपना शिष्य बनालो। मैंने ऐसा ही किया। मगर संस्कार के पश्चात् दत्तात्रेय ने मुझसे कुछ भी नहीं पढ़ा लिखा। वह प्राकृतिक दृश्य देखने का इच्छुक था। वन, पर्वत, फूल, पत्ते, पक्षी सब उससे बातचीत करते थे। उसको मेरी कुछ भी परवाह नहीं हुई अन्यथा उसने स्वयम् सीधे प्रकृति से अपनी शिक्षा ग्रहण की और बहुत बड़ा ज्ञानी हो गया। दुर्वासा व चन्द्र को मैंने थोड़ी विद्या पढ़ाई मगर क्या जाने अनुसुइया ने क्या जादू किया था, यह लड़कपन ही से बाल की खाल निकालने लग गये और बड़े विद्यावान हुये। देखिये यदि माता अपने पुत्रों को अच्छी शिक्षा दे तो इसका परिणाम यह होता है। मेरी स्त्री ने सन्तान की शिक्षा में भी बहुत कुछ मेरा हाथ बटाया और मेरे उत्तरदायित्व को बहुत कुछ अपने ऊपर ले लिया। स्त्री हो तो ऐसी ही हो। दुर्वासा तनिक कठोर प्रकृति का था। आपने सुना होगा कि उसने किस प्रकार इन्द्र को उसके दुर्भाव पर श्राप दिया जिसके कारण समुद्र मथा गया और उससे १४ रत्न निकले। चन्द्र सुशील था, सोच विचार वाला था। दत्तात्रेय शान्त चित्त व वैरागी हुआ। मैं उनका हाल आपको सुनाना नहीं चाहता क्योंकि आपको थोड़ा बहुत उनके कृत्यों से परिचय है। आपने केवल मेरी अपनी कथा सुनने की

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY PURNADAYAL

इच्छा प्रगट की है अतएव मैं इतना ही पर्याप्त समझता हूँ कि इसके क्रम में जो कुछ अनुसुइया ने मेरा साथ दिया है आपको सुनाऊंगा; क्योंकि अनुसुइया मेरी अर्द्धांगिनी है। मुझसे पृथक नहीं है। स्त्री व पुरुष मिलकर एक पूर्ण पुरुष बनते हैं। यदि स्त्री को पुरुष से पृथक कर दिया जावे तो केवल आधा व्यक्तित्व रह जाता है और वह भी निकम्मा। यहाँ तक कि वह वर्णन करने योग्य नहीं रहता। यही कारण है कि संसार में स्त्री के अर्ध भाग को बेहतर हिस्सा (Better half) कहा जाता है और संसार के व्यवहार में उसको मुख्य समझा जाता है। इसी कारण पुकारते समय पहले स्त्री ही के नाम लेने का रिवाज है और जिनमें सभ्यता है वह स्त्री को पुरुष से श्रेष्ठ समझते हैं और उसका अधिक सम्मान करते हैं। कोई यज्ञ पूरा नहीं होता जब तक स्त्री सम्मलित न हो। मैंने कभी अनुसुइया को बुरा भला नहीं कहा। गौतम के समाचार सुनकर मुझको लज्जा आई कि उन्होंने अहिल्या को व्यर्थ श्राप दिया। इसमें भी उनका दोष था। यह बड़े तर्क करने वाले हैं। अपनी गलती को कभी स्वीकार न करेंगे। हज़ार तर्क वितर्क करेंगे मगर जो कुछ मैं कह रहा हूँ झूठ नहीं है। गौतम मुझको क्षमा करें। जहाँ लोग तर्क वितर्क करते हैं वहाँ ही गलती होती है। सीधी व सची बातों में क्या गलती होगी। यह बात की बात थी। अब आगे मेरी कथा को सुनिये:—

जब मेरी आयु अधिक हो गई मैंने अपनी स्त्री से कहा, 'प्रिये ! यदि तू कहे तो मैं कुछ दिनों के लिये योगाभ्यास करूँ।' वह बोली, "इससे सुन्दर और क्या कार्य हो सकता है। तुम कहीं और जगह न जाओ। आश्रम में ही रहो और मैं समय समय पर तुम्हारी सेवा भी करती रहूँगी। कौन जाने जंगल में क्या हो। ऐसा न हो कि आपको किसी प्रकार का कष्ट हो।

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

नहीं तो मुझको बड़ा दुख होगा और मैं कभी अपने क्षमा न कर सकूंगी। इसके अतिरिक्त आप भी जान मैं आपकी छाया हूँ। कभी छाया अलग होती है आपके लिये मैं एकान्त स्थान बना देती हूँ। वहाँ रहकर अभ्यास कीजिये। मैं आपके खाने पीने व विश्राम का हर समय ध्यान रखूँगी।"

मैंने अपनी अर्द्धांगिनी की बात मान ली और योग की समाधि का साधन करने लगा। घंटों ध्यान में मग्न रहता था और जब आँख खुलती थी मेरी स्त्री फल फूल और जल लिये हुये खड़ी मिलती थी। मैं प्रसन्न हो जाता था और उसको हृदय से आशीर्वाद देता था।

सज्जनो! मुझे अभ्यास करते हुये बहुत समय व्यतीत हो गया। देश में भयंकर अकाल पड़ गया। खाने पीने की सामिग्री कम मिलने लगी। साग पात, सब्जी तरकारी, फल फूल सब सूख गये। मेरा आश्रम पर्वत पर था। पानी के झरने भी सूख गये। मुझको क्या सूचना थी कि बाहर संसार में क्या हो रहा है। इसके सिवा समय पर हर वस्तु तय्यार मिलती थी। मुझको भूल कर भी ध्यान नहीं आया कि अनुसुइया को क्या कष्ट उठाना पड़ता होगा। वह बराबर उसी प्रेम के साथ मेरी सेवा का दम भरती थी। हंसकर बातें करती और मुझको खिला पिलाकर आप अलग चली जाया करती थी।

ज्यों ज्यों अकाल की कठोरता बढ़ती गई अनुसुइया को फल फूल व पानी लाने के लिये पहाड़ पर मीलों की यात्रा प्रति दिन करनी पड़ती थी। एक स्थान पर उसको जल का कुण्ड मिल गया था। वहाँ से प्रति दिन घड़े भर लाया करती थी। अन्त में वह भी सूख गया। उसने मीलों का चक्कर लगाया कहीं जल का पता ठिकाना भी नहीं मिला। यदि उसने मुझसे यह सब बातें बता दी होती तो मैं कभी उसको कष्ट न देता। मगर उसके

स्त्रीपन के स्वभाव आज्ञा नहीं देते थे कि वह अपनी बेव
मुझ पर प्रगट करती। बेचारी बहुत व्याकुल हुई। एक ि
कहीं भी पानी नहीं मिला। वह थक भी गई थी। खोज भी व
की जाती है जहाँ मिलने की आशा हो। वह बहुत घबराई और पर्वत के एक कन्दरा में बैठकर कठिन विलाप करने लगी। हाय ! मेरे पति की क्या दशा होगी। मेरे जीते जी उनको दुःख हो, कैसे पश्चाताप की बात है ! जब वह इस प्रकार धाड़ें मार कर रोने लगी, एक देवी का उधर आगमन हुआ। वह पूछने लगी कि तू क्यों रोती है ? उसने सारा वृतान्त कह सुनाया। वह बोली कि भला ! सती व पतिव्रता स्त्री को कभी दुःख होता है। उसकी शक्ति सब कुछ उत्पन्न कर लेती है। ऐ कोमलाङ्गी सुन्दरी यह आश्चर्य की बात है।

अनुसुइया ने पूछा – "आप कौन हैं ? अब मैं क्या करूं ? मुझसे पति के दुख देखे न जायंगे। चाहे कुछ ही क्यों न हो जाय, अब मैं यहाँ ही जान दूंगी। क्या मुंह लेकर घर जाऊँ और कैसे कहूँ कि जल नहीं मिलता। वह योगाभ्यास कर रहे हैं। यही समय मेरी सेवा का है और मैं ऐसी अभागी हूँ कि सेवा में अब मुझसे अपराध होना चाहता है। उस देवी ने कहा घबराओ नहीं। 'मैं सरस्वती हूँ, गंगा हूँ। मैं सोचकर कोई न कोई युक्ति तुझको बता दूंगी। ऐ अनुसुइया ! तू स्त्रियों में श्रेष्ठ है। मैं तेरी दीनता देखकर तेरी ओर आकर्षित हुई हूँ। इस समय मेरे यहाँ आने की कोई आवश्यकता नहीं थी। अनुसुइया उसके पाँव पर गिरी। 'गंगा माई ! तू धन्य है। प्यासों को पानी देने वाली, जीवन दाता तुझको नमस्कार है। ऐ देवी ! जिस तरह तूने भागीरथ का कल्याण किया था वैसा ही मेरा कल्याण कर।' गंगा हंसी—पुत्री ! कोई किसी का कल्याण नहीं करता और न कर सकता है। मनुष्य मात्र जो कुछ चाहता है स्वयम् कर

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

लेता है। केवल संकल्प शक्ति व दिल को हरकत दे
है। तूने जो अपने पति के लिये इतनी जान दी
प्रत्यक्ष प्रगट होता है कि तुझमें हद दर्जे की सहन
सहन शक्ति, दृढ़ता और निश्चलता ही से काम बनता है। देख, अन्तर दृष्टि से देख। तेरे सम्मुख पानी का सोता बह रहा है। उसकी धार धीरे-धीरे पृथ्वी से मिली हुई जा रही है। उससे अपने घड़े को भरले और यह सोता तुझको सदा दिखाई दिया करेगा और तुझको पानी पर्याप्त मात्रा में दे दिया करेगा। अनुसुइया ने कहा तूने बड़ी कृपा की। मेरे और प्राणपति के प्राणों की रक्षा की। मैं लौटकर जाऊंगी और जब इस निर्मल जल को देखकर प्राणपति मुझसे पूछेंगे तो मुझको तेरी कृपा का वृतान्त सुनाना पड़ेगा। इसलिये तू यहाँ ही थोड़ी देर के लिये ठहरी रह ताकि वह भी आकर तेरा दर्शन कर सकें। गंगा ने इस बात को स्वीकार कर लिया। वह वहाँ ही ठहरी रही। अनुसुइया मेरे पास दौड़ी हुई आई। आज मेरी आँख शीघ्र खुल गई थी। अनुसुइया को आश्रम में न पाकर मैं व्याकुल हो रहा था। इतने में वह आ गई। पानी का कमण्डल और फल फूल उपस्थित किया। मैंने फल खाकर पानी पी लिया। जल दूध के समान उज्ज्वल और मीठा था। अनुसुइया से पूछा, यह जल कहां का है। उस समय उसने अकाल का सारा हाल कह सुनाया और गंगा के मिलने की घटना भी बताई। मैं उसी समय उठ खड़ा हुआ और वहां जाकर उसके दर्शन किया और अपने आश्रम में आने की प्रार्थना की। गंगा वहाँ खुशी से चली आई, मगर कहने लगी कि यदि अनुसुइया अपने स्त्री धर्म और पतिव्रत धर्म का एक साल का फल मुझको दे देवे और सदा शिव को प्रसन्न करले तो मैं खुशी से यहां रहूँगी। मुझमें अनुसुइया का प्रेम बहुत है। सज्जनो! अनुसुइया ने प्रसन्न

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

होकर कहा—"मैं अपना पुण्य तुझको देती हूँ" और शिव ने भी अपनी प्रसन्नता प्रगट की। तब गंगा रहने के कारण प्र हो गई और अब तक वह वहाँ बह रही है और उसका न अत्रेश्वर गंगा और अत्री गंगा है और उसका जल सूखा पड़ने पर भी नहीं सूखता।

मेरी स्त्री इस प्रकार की देवी है। मैं उसका वृतान्त अब अधिक क्या सुनाऊँ। इतना ही पर्य्याप्त है और इसी से तुम बहुत कुछ समझ सकते हो। उसने जिस प्रकार पत्नी का इलाज किया और सीता जी को जिस तरह उपदेश दिया उसकी कथा तुम लोगों को ज्ञात है। मैं क्यां दोबारा कहूँ।

संक्षेप में, ऐ ऋषियो! मैं अनुसुइया के संग बहुत प्रसन्न हूँ और मुझको किसी प्रकार का कभी दुःख नहीं हुआ। यह मेरी संक्षिप्त कथा है।

गौतम ने कहा—महाप्रभु! आपने बहुत बुरी तरह मेरी खबर ली, लेकिन खैर अब ज़रा बताइये कि इस कथा का अध्यात्मिक अर्थ क्या है?

अत्रेय ऋषि बोले—अनुसुइया आत्म वृत्ति का नाम है। इसका भाई कपिल विचार वृत्ति है। इसकी सन्तान दत्तात्रेय, चंद्र और दुर्वासा सत् रज, तम के मिले हुये बुद्धि, मन और अंहकार के रूप हैं। अत्रेय शरीरधारी आत्मा है। जिस समय आत्मा शरीर में ऊपर चला जाता है शरीर निर्बल हो जाता है। अकाल पड़ जाता है। अन्न जल का अभाव होजता है। उस समय आत्मवृत्ति में जो संस्कार दबे पड़े रहते हैं उन ही के जगाने से फिर जीवन रूपी गंगा आती है और अकाल दूर हो जाता है। यह इस कथा का कुछ शब्दों में संक्षेप विवरण है। राम चेतन की धार है जिसकी साथी बुद्धि रूपी सती सीता है। सीता को

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

अनुसुइया रूपी आत्म-वृत्ति का यह उपदेश हुआ था कि से विमुख होकर कभी जीवन की इच्छा न की जाय जो बुद्धि आत्मा के आधीन नहीं रहती उसमें असल नहीं आता। चित्रकूट रूपी पर्वत है जहां अत्रेय रूपी आत्मा का आश्रम है। मन से तात्पर्य्य है जिसमें चित्र अर्थात् संस्कारों के सूक्ष्म चित्रों का कूट है और अत्रीगंगा उसकी जिन्दगी है जिसके बिना मन का उपवन हरा भरा नहीं रह सकता। समुद्र मन्थन मन के गति देने से अभिप्राय है। चौदह रत्न चौदह विद्यायें हैं। ऐ ऋषियो! तुम सब आत्म ज्ञानी हो। हर एक बात को समझते हो लेकिन यदि तुम्हारी इच्छा हो तो मैं फिर व्याख्या के साथ इस कथा को अध्यात्म ज्ञान में घटाने का प्रयत्न करूं। गौतम ने कहा बस कीजिये इतना ही पर्य्याप्त है। आपकी कथा अति शिक्षाप्रद है।

— :o: —

(६) कश्यप ऋषि की कथा

अत्रेय ऋषि का चुप होना था कि विश्वामित्र जी ने कश्यप ऋषि से हाथ जोड़ कर कहा :—

प्रजापते! अब कृपया आप अपनी कथा सुनाइये। आपके जीवन की घटनायें अति हर्षवर्द्धक और शिक्षाप्रद होंगी। आप सब ऋषियों में बड़े हैं और हम सब लोग बड़े चाव से आपके व्याख्यान को सुनेंगे।

कश्यप ऋषि बोले :—

अमृत विष एक संग हैं, देखा नैन उघार।
द्वंद रूप यह जगत है, सज्जन करो विचार॥

चलती चक्की देख कर, दिया कबीरा रोय।
दो पाटन बिच आन के, साबित रहा न कोय॥

मैं क्या कहूँ क्या न कहूँ। कहते हुये लज्जा आती है। न कहता हूँ तब भी लाज है। तुम मेरा वृतान्त जानना चाहते हो। तुमको अधिकार है कि तुम मेरी कथा सुनो।

अपने घर की निन्दा, पराये घर की हँसी

मेरे वृतान्त इस प्रकार के हैं मगर इनसे मैंने बड़े बड़े तजुर्बे प्राप्त किये हैं इसलिये तुमको अवश्य सुनाऊँगा ताकि तुमको भी विचार करने का अवसर हाथ आवे!

सुनो! ब्रह्मा जी के एक मानस पुत्र हुये हैं जिनका नाम मरीचि ऋषि था। मैं उनका पुत्र हूं। मेरा नाम अरिष्टनेमि भी है। मेरी माता का नाम कला था। यह कर्दम ऋषि की पुत्री और महामुनि कपिल की बहिन थी। इसलिये अत्रेय ऋषि के साथ एक प्रकार का विशेष सम्बन्ध है। मैं मुनियों में बड़ा तेजस्वी प्रतापी और भाग्यवान समझा जाता हूँ। मेरे सर के बाल तपाये हुये कुन्दन के समान चमकते हैं और यही कारण है कि किसी को मेरे सम्मुख आने का साहस नहीं होता और सबके हृदय पर मेरा प्रभाव जम जाता है।

मैं जब युवा अवस्था को पहुँचा दक्ष प्रजापति की तेरह कन्यायें मुझको विवाही गईं, जिनके नाम ये हैं:—दिति, अदिति, दनायू, काला, कपिला, क्रोधा, इला, विन्ता, संधिका, मुनि, कद्रु, प्राधा आदि।

इनमें से दिति व अदिति को सब पर श्रेष्ठता का पद प्राप्त है। और फिर इन दोनों में से मैं अदिति को अधिक प्यार करता था।

मेरी जितनी सन्तानें हैं उतनी किसी की भी नहीं हैं। यह

कारण है कि मेरा सब प्रजापतियों में सबसे अधिक
है। और यह प्रचलित है कि चाहे कोई किसी ऋषि
हो मगर जब वह अपना गोत्र भूल जाता है तो मेरे
में गिना जाता है।

दिति से जो मेरी सन्तान हुई वह राक्षस, दैत्य, दानव व मयदानव आदि कहलाये। अदिति की सन्तान देवता आदि हैं। सृष्टि में देव, दैत्य, मनुष्य अधिकतर मेरे ही वंशज हैं। मैं मंत्रद्रष्टा ऋषि हूँ। वेदों का जानने वाला हूं, अतएव मुझको प्रजा के बृद्धि के सारे भेद ज्ञात हैं और उनसे लाभ उठा कर मैंने अपनी सन्तान सब से अधिक बढ़ा ली। यहाँ तक कि सारे ब्रह्माण्ड में मेरी ही सन्तान अधिकतर फैली हुई है।

मगर आप जानते हैं कि जिसके एक से अधिक स्त्री होती है उसकी क्या दशा होती है। रोज़ रोज़ की लड़ाई रहती है। एक सौत दूसरे से लड़ती है। एक सौत की सन्तान दूसरी सौत की सन्तान की शत्रु बन जाती है। जो प्रेम भाई भाई में होना चाहिये वह नहीं रहता। एक दूसरे के विपक्षी बन जाते हैं। और रात दिन इसी चिन्ता में रहते हैं कि किस प्रकार एक दूसरे को नीचा दिखायें और अपनी श्रेष्ठता प्राप्त करें।

यही कारण है कि मेरी सन्तान में अत्यन्त खैंचातान का सामान सदा से उपस्थित है और वह अब तक बराबर लड़ते झगड़ते चले आ रहे हैं और देवासुर संग्राम के दृश्य हर समय मेरी दृष्टि के सम्मुख रहते हैं।

अपनी सन्तान का वृतान्त तुमको क्या सुनाऊँ। सोचते ही रोंगटे खड़े होजाते हैं। एक बार की कथा है। राजा बलि जो दैत्य है बड़ा प्रतापी होगया। देवताओं ने उस पर विजय प्राप्त करना चाहा। उसमें दान देने का बड़ा गुण था। वह किसी प्रकार पराजय नहीं होता था। तब इन्द्र की सहायता से

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

विष्णु ने मेरी स्त्री अदिती के गर्भ में बामन अवतार धा किया और मोहनी रूप बनाकर उसको छला और उस राजपाट छीन कर इन्द्र को दे दिया।

इसी प्रकार दूसरे अवसर पर हिरण्य कश्यप के मारने क लिये प्रह्लाद की भक्ति के सिलसिले में नृसिंह का अवतार हुआ।

सन्तान की ममता सबको होती है। देवता और दानव दोनों मुझको प्यारे हैं। मगर मैं इनकी लड़ाई झगड़े से अधिक तंग होगया और घर बार छोड़कर मेरु पर्वत पर तप करने चला गया। दिति ने अवसर देखकर अपनी सन्तान को मेरे पास भेजा ताकि वह देवताओं की अनुपस्थिति में मुझको प्रसन्न करके वह बात पूछ लेवें जिससे उनको देवताओं पर विजय हो। मैंने उस अवसर पर जो शिक्षा दैत्यों को दी वह तुझको सुनाता हूं। मैंने उनसे कहा कि ऐ मयदानव! यह सत्य है कि तुममें विद्या व बुद्धि है मगर तुममें से किसी को न सच्चे मार्ग की खोज है न सच्चाई का प्यार है। तुम समझते हो कि ऊपरी विद्या से तुम अपनी भलाई कर लोगे। यह तुम्हारी भूल है। सच्ची भलाई जब होगी धर्म से होगी। अधर्म से कभी भलाई नहीं होती। यह सम्भव है कि कुछ दिनों के लिये मनुष्य अधर्म में प्रवृत होकर थोड़ी बहुत शक्ति प्राप्त करले क्योंकि शक्ति चित्त के एकाग्र करने में होती है किन्तु जो लोग कि भलाई पर अपने चित्त को एकाग्र करते हैं उनकी भलाई बहुत दिनों के लिये होती है। जो अपने चित्त को बुराई पर एकाग्र करते हैं उनकी बाहरी देखने में भलाई कुछ दिनों की होती है और वह शीघ्र ही विनाश को प्राप्त हो जाते हैं। देवताओं को जो तुम पर श्रेष्ठता प्राप्त है उसका कारण यह है कि उनमें अधिक अंग सच्चाई व धर्म का होता है। वह तीन चौथाई अच्छे और एक चौथाई बुरे हैं क्योंकि उनमें भी ईर्षा, डाह व

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

कपट की आदतें होती हैं और जब इस ओर उनका झु है वह कमजोर होते हैं और तुम अपनी एक चौथाई साधन से उन पर विजयी हो जाते हो। तुमसे ती बुराई व एक चौथाई भलाई है। यदि देवता सदा भलाई की ओर झुके रहें तो तुमको कभी उन पर विजय न प्राप्त हो। मैं तुमको यह मन्त्र दूंगा कि जो कुछ तुममें भलाई हो उसी की वृद्धि करो ताकि यदि देवताओं से बढ़कर नहीं तो उनसे घटकर भी न रहो।

मैंने यह सब बातें दैत्यों को सिखायीं पर वह सीधे रास्ते पर नहीं आये और लड़ाई झगड़े से ही काम रखा, जिसका परिणाम यह हुआ कि देवता भी उनसे लड़ते झगड़ते रहे। एक बार का प्रसंग है कि मयदानव और सूर्य पर्व में बातों-बातों में लड़ाई हो गई। और इन्द्र ने मयदानव पर वज्र चलाया। मुझको यह दशा देखकर क्रोध आया और मैंने इन्द्र को डांट फटकार की और बुरा भला कहा।

ऐ ऋषियो ! मैं तुमसे क्या कहूँ। मेरी सन्तान बड़ी लड़ाका है। उनको लड़ाई भिड़ाई के सिवा और कोई काम नहीं। इन सब झगड़ों को देखकर मैंने अपने नाम से एक स्मृति बनाई कि लोग उसके आदेशानुसार काम करें। लड़ने झगड़ने से बचें। इस स्मृति में मैंने हर प्रकार के धर्म-कर्म आदि का वर्णन किया है। जो जिस तरह का है, जिसका जैसा स्वभाव व प्रकृति है सब उसी के अनुसार बर्ताव करें। धर्म को कभी हाथ से न दें। कोई किसी पर अत्याचार और सख्ती न करे और न पक्षपात से काम ले। मैंने जो कुछ मुझसे हो सका किया मगर मेरी सन्तान में कभी मेल मिलाप नहीं हुआ और देवासुर संग्राम का क्रम सदा जारी रहता है जिसका प्रायः बहुत दुःख हुआ करता है।

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

अन्त में जब मैंने देखा कि इस प्रकार यह देवता और असुर मानने वाले नहीं हैं और मेरी तेरह स्त्रियों की सन्तान लड़ने-भिड़ने से न मानेगी मैं मेरु पर्वत पर चला गया और जिस प्रकार शिव जी कैलाश के शिखर पर रहकर परमात्मा का ध्यान करते हैं मैं भी ब्रह्म के ध्यान में मग्न रहने लगा। जो व्यक्ति एक से अधिक स्त्रियाँ करता है और जिसके यहाँ आवश्यकता से अधिक सन्तान होती है याद रक्खो उसके घर में कभी शान्ति और कुशलता नहीं होगी और अन्त में मेरी तरह उसको भी किसी और प्रकार शान्ति खोजनी पड़ेगी। ऐ ऋषियो! यह मेरी संक्षेप कहानी है जो मैंने आपके सम्मुख वर्णन की है। मेरे वृतान्त बहुत हैं। मैं क्या तुमको सुनाऊं। केवल इतना ही पर्याप्त है।

विश्वामित्र ने कहा—भगवान कश्यप! इसमें सन्देह नहीं कि आपकी कहानी बड़ी मनोरंजक, विचित्र और शिक्षाप्रद है किन्तु इसके व्याख्या की आवश्यकता है यदि आप आज्ञा दें तो मैं एक एक प्रश्न करता जांऊ और आप मुझको उसका उत्तर देते जांय।

कश्यप जी—बहुत अच्छा आप पूछिये।

विश्वामित्र ने प्रश्न किया—ब्रह्मा और मरीचि से आपका क्या तात्पर्य्य है?

कश्यप बोले—ब्रह्मा मन को कहते हैं और मरीचि मन के संकल्प की धार का नाम है। संस्कृत में इसके अर्थ हैं, प्रकाश की किरन। जिस समय मन में फुरना होती है उस समय उसकी गति से जो धार निकलती है वह मरीचि है और जब यह धार एक स्थान पर ठहर जाती है उससे जो रूप बनता है वह कश्यप है।

विश्वामित्र ने पूछा—दक्ष प्रजापति क्या है और उसकी

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

१३ कन्यायें जो आपको विवाहित हैं उनसे क्या तात्पय

कश्यप जी ने उत्तर दिया—संस्कृत में दक्ष के अर्थ योग्य के हैं। दक्ष मन की उस योग्यता को बोलते हैं प्रकार की धारों से नाचती रहती है। तेरह प्रकार की धारें दक्ष की १३ कन्यायें हैं। उनको तुम पाँच कर्म इन्द्रियां, पाँच ज्ञान इन्द्रियां और तीन मन बुद्धि व अहंकार समझो। यह मुझको विवाही गई हैं। यदि यह मेरे साथ न हों तो मैं प्रजा की उत्पत्ति नहीं कर सकता और न संसार का कोई व्यवहार हो सकता है। मन की जितनी भावनायें और तरंगें हैं उनके परदे में यही १३ शक्तियाँ प्रविष्ट करके काम करती हैं और सारे जगत के दृश्य इन्हीं की संन्तान हैं।

विश्वामित्र बोलेः—इन तेरहों में से दिति और अदिति की क्यों महानता है।

कश्यप ने उत्तर दिया—दिति के अर्थ हैं काटने वाली अदिति के अर्थ हैं पृथ्वी। एक में सहन शक्ति है और दूसरे में चंचल शक्ति है। यही दोनों वृत्ति संसार में द्वन्द की रचना करती हैं। यह मन व बुद्धि दोनों में रहती हैं। आगा पीछा करना, बुरा भला करना, बनाना बिगाड़ना इनके काम हैं। तुम देखो। जब तुम किसी काम के करने के सम्बन्ध में सोचने लगते हो तो उसमें यह दोनों बातें रहती हैं। बुराई भलाई, प्रकाश और छाया, संकल्प और विकल्प। यह सब इन्हीं दोनों के आधीन हैं और द्वन्द की रचना में इन्हीं दोनों का हाथ अधिकतर रहता है। यही कारण है कि मेरी और स्त्रियों की अपेक्षा इनको उच्च पदवी प्राप्त है।

विश्वामित्र ने कहा—देवता और दानव क्या है।

कश्यप जी बोलेः—मन की बुरी भावनायें दानव अथवा राक्षस हैं और मन की शुभ भावनायें देवता या सुर हैं। यह

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

दोनों साथ-साथ रहते हैं क्योंकि मनुष्य के मन में बुरे और भले विचारों के साथ संस्कार हर समय विद्यमान रहते हैं और उनके बीच सदा विरोध की अग्नि भड़कती हुई रहती है। कभी नेकी विजयी होती है और कभी बदी विजयी होती है। बदी में अधिक निबलता है। नेकी में कम निबलता है। नेकी में अधिक शक्ति है और बदी में कम शक्ति है। किन्तु निबलता व शक्ति दोनों ही में है। जो मनुष्य नेकी को नेकी समझकर करता है समझ लो कि उसमें बदी अवश्य होगी क्योंकि नेकी को नेकी समझकर करना ही बदी है।

विश्वामित्र ने प्रश्न किया। बलि राजा क्या है? वामन क्या है? और क्यों बलि राजा को छला गया?

कश्यप ने कहा—बलि दान देने की वह राक्षस शक्ति है जो दान के क्रम में ख्याति और बड़ाई की इच्छुक है। जो व्यक्ति दान को दान समझकर करता है और उसको अपनी नेक नामी और कीर्ति का साधन बनाता है उसमें राक्षसी वृत्ति होती है। इस प्रकार का दान देना प्रायः मनुष्य की गिरावट का कारण होता है क्योंकि ऐसे दान में निबलता रहती है। और अवसरवादी मनुष्य ऐसे मनुष्य को उसके दान के शस्त्र से मार देते हैं। दृष्टान्त है। एक शख्स नेकनामी प्राप्त करने के लिये दान दे रहा है। अब यदि कोई उसको क्षति पहुँचाना चाहे तो इतना ही पर्याप्त है कि उसकी नेकनामी को तनिक सा धक्का लगावे। वह तुरन्त क्रोधित हो जायगा और उसकी कीर्ति भंग हो जायगी। लेकिन जो व्यक्ति स्वभावानुसार दान देता है और उसको उसके क्रम में मान बड़ाई का तनिक भी ध्यान नहीं है तो इस व्यक्ति को कोई भी क्षति नहीं पहुँचा सकता क्योंकि उसके दान में कोई त्रुटि या निबलता नहीं है। उसका दान इस प्रकार का स्वाभाविक है जैसे प्राणी बिना किसी

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

आपत्ति के साँस लिया करता है। बली रूपी राक्ष दान में शक्तिशाली होना चाहती थी। वामन रूपी सात्विक वृत्ति ने जिसका सम्बन्ध विष्णु से है प्रग उसको नीचा दिखाया। उसकी ग़लती बतला दी और वह पाताल देश को चला गया। यह वामन और बलि के प्रसंग का अभिप्राय है। इसमें यह दिखाया गया है कि किस प्रकार राक्षसी वृत्ति देवताओं की वृत्ति का आधार लेकर अपनी कमी और अशक्तता के कारण मारी जा सकती है।

विश्वामित्र बोले—यह तो होगया। अब प्रह्लाद, हिरण्यकश्यप और नृसिंह के प्रति आप क्या वर्णन करेंगे?

कश्यप ने उत्तर दिया—हिरण्यकश्यप पूर्णतः राक्षसी वृति है जिसने शारीरिक बल से दैवी वृति को पराजय करना चाहा था। उसने समझ लिया था कि शक्ति, बल और पराक्रम से सब कुछ हो सकता है और उत्पात मचाना आरम्भ कर दिया था मगर मैंने तुमसे पहले ही कहा है कि राक्षसी वृति में भी एक चौथाई नेकी होती है। वह सर्वांग से बुरी नहीं होती। यह नेकी की वृति उसी हिरण्यकश्यप रूपी दैत्य की सन्तान प्रह्लाद है जिसके कारण विष्णु की परमशक्ति सात्विक वृति को शारीरिक शक्ति का नमूना बन कर नृसिंह के रूप में प्रगट होकर हिरण्यकश्यप को मारना पड़ा। ऐ विश्वामित्र! मैं तुम से सचमुच कहता हूं कि जो छल कपट के साथ अपनी बदी (बुराई) को छिपाना चाहते हैं वह छल उनका शत्रु होकर उनको मारता है और जो प्रगटरूप में बुराई करते हैं वह देखते देखते मार दिये जाते हैं।

विश्वामित्र ने कहा—आपने बहुत अच्छी बात कही। निस्सन्देह यह अक्षरशः ठीक है। मगर अब यह कहिये कि

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

आपने जो कश्यप स्मृति रची है उस से आपका अभिप्राय क्या है ?

कश्यप जी बोले—स्मृति कहते हैं याद रखने को। मनु के सारे अनुभव व ज्ञान स्मृति में रहते हैं। मैंने अपनी स्मरण शक्ति से काम लेकर प्राचीन अनुभव व ज्ञान को ऐसे रूप में स्थिति किया है कि मन के अच्छे व बुरे भाव उसके आधीन रहकर एक विशेष नियम पर चलें ताकि अन्तरीय प्रबन्ध और आराम में अन्तर न पड़े। बहुधा लोग इस प्रकार के तजुर्बों के आधार पर अपने जीवन के कार्य्यक्रम या नियम बनाया करते हैं। स्मृति रचने से मेरा इतना ही तात्पर्य्य है।

विश्वामित्र ने प्रश्न किया—अब केवल एक प्रश्न रह गया है कि मेरू क्या है और वहाँ शान्ति कैसे प्राप्त होती है।

कश्यप जी ने उत्तर दिया – ऐ विश्वामित्र ! जब तक कि दिति अदिति की सन्तान से सम्बन्ध है, दूसरे शब्दों में जब तक मन के बुरे भले भावों से काम रहता है तब तक शान्ति व सुख नहीं प्राप्त होता। मनुष्य कभी बुराई करता है कभी भलाई करता है। नेक व बुरे कर्मों के संस्कार दोनों मन को प्रभावित करने के इच्छुक रहते हैं। कभी भी सम्भव नहीं है कि जिसका मन बेक़ाबू है वह शान्त हो सके, चाहे वह बन में जाये चाहे वह घर में रहे ! हर दोनों स्थान पर उसकी एक सी दशा रहेगी। इसके लिये मनुष्य मेरू पर्वत की चोटी पर निवास करे। तुम्हारे शरीर के पीठ के पीछे जो हड्डी बीच में आती है उसका नाम मेरू दण्ड है। उसका सिलसिला सूक्ष्म व स्थूल बनता हुआ मस्तिष्क में जाकर समाप्त होता है। जहाँ यह समाप्त होता है उसी का नाम मेरू है। इसको योगी ब्रह्मरेन्ध्र भी कहते हैं। यही सुमेरू पर्वत की चोटी भी कहलाती है।

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

शान्त मन जब योगाभ्यास करते हुये इस स्थान प
टिक जाता है वह ब्रह्म का ध्यान करते हुये शान्ति
होता है। मुझको भी यहाँ शान्ति प्राप्त हुई। यह
चोटी की व्याख्या है।

— ❀ —

(७) भारद्वाज ऋषि की कथा

कश्यप मुनि की कथा सुनकर सब चुप हो गये। थोड़ी देर तक यह दशा रही। फिर अत्रेय ऋषि ने कहा। सज्जनो! सप्त ऋषियों में अब केवल भारद्वाज जी रह गये हैं। यह बड़े ज्ञानी ध्यानी हैं। इनको भी मुखारविन्द से कुछ बोलना चाहिये। भारद्वाज जी बोले--

खुदी[1] गई तो खुदा खुद ही मुझको आन मिला।
मकां की हिर्स[2] मिटी मुझको लामकान मिला॥
नहीं है नाम को मुझमें अनानियत[3] बाक़ी।
भुलाया आपको जब उसका खुद निशान मिला॥
पता दिया मुझे मुर्शिद[4] ने दीन व दुनियां का।
नज़र करम[5] की हुई मुझ पे, ज्ञान ध्यान मिला॥

सज्जनो! मेरा आश्रम प्रयागराज में है जहाँ गंगा, जमुना और सरस्वती का संगम है। अक्षयवट का विशाल वृक्ष मेरे झोंपड़े पर छाया किये रहता है। मैं अपने आश्रम में भगवत की भक्ति के ध्यान में रहता था। वहीं मुझको याज्ञवल्क्य ऋषि के दर्शन हुये। उन्होंने पहली बार मुझको रामचन्द्र जी की कथा सुनाई। मैं कहीं खोज करने को भी नहीं निकला। राम स्वयम् वहां आये। मुझको साक्षात् अपना दर्शन दिया

(१) अहंकार (२) इच्छा (३) अहंकार (४) गुरु (५) दयादृष्टि।

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

और मैं कृतकृत्य होगया। मैं क्या चीज़ हूँ जो आपको अप हाल सुनाऊँ। मुझको रातदिन राम की प्यारी साँवली मूर्ति ध्यान रहता है। महाप्रभु हर समय मेरे हृदय में विराजम रहते हैं। इसलिये मैं उन्हीं के मंगल चरित्र आपको सुनाऊँगा। आप लोगों ने अपनी अपनी बीती सुनाई है। मुझको तो यह भी पता नहीं कि मैं कौन हूं क्या हूँ। मैं आपको केवल राम कथा संक्षेप के साथ सुनाऊँगा। आप उसको सुनकर प्रसन्न होंगे। सुनो! मैं जो कुछ कहता हूँ वह अद्भुत चरित्र है और कौन जाने वह शायद आप सब लोगों के वृतान्त से अधिक मनोरञ्जक सिद्ध हो।

सरयू के किनारे हिमालय से कुछ दूरी पर एक विशाल नगर बसा है। उसका नाम अयोध्या है। दशरथ उस नगर का राजा था। उसके सन्तान नहीं थी। उसने वशिष्ठ ऋषि के कहने से यज्ञ किया। उसका फल यह हुआ कि उसके घर में तीन रानियाँ कौशिल्या केकई और सुमित्रा के गर्भ से चार पुत्र पैदा हुये। राम, भरत लक्ष्मण और शत्रुघ्न।

राम लक्ष्मण साथ-साथ रहते थे। इसी प्रकार भरत व शत्रुघ्न का साथ रहता था। जब राम की आयु १२ वर्ष की हुई विश्वामित्र ऋषि ने उनको अपने यज्ञ की रखवाली के लिये दशरथ से माँग लिया। वह उनको अपने आश्रम में लाये। चूंकि राक्षस विघ्न पैदा करते थे ऋषि ने राम से कहा कि पुत्र! देखना राक्षस मेरे यज्ञ और हवन के समय उत्पात न मचायें। यह कह कर ऋषि तो अपने काम में लग गये। राम तीर व कमान हाथ में लेकर उनकी रक्षा करने लगे। राक्षस रीत्यानुसार आये। राम के तीरों से मारे गये और ऋषि का अनुष्ठान पूरा हुआ।

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

जब ऋषि ने देखा कि राम में बहुत बल और ते
उनकी कीर्ति बढ़ाने के लिये मिथला देश में आये उ
जनक की लड़की सीता का स्वयम्बर होने वाला
लड़की विचित्र प्रकार से उत्पन्न हुई थी। अकाल के दिनों में जब वर्षा नहीं हुई थी, तो पंडितों के कहने से जनक ने पृथ्वी (भूमि) में हल चलाया। पृथ्वी में एक घट गड़ा हुआ था। उसको हल की ठोकर लगी, उससे सीता पैदा हुई। यह बड़ी सुन्दर थी। जनक ने उसको अपनी लड़की समझी और जब वह युवा अवस्था को पहुँची उसके विवाह के निमित्त स्वयम्बर रचा। प्रण यह था कि जो व्यक्ति शिव जी के धनुष को चढ़ावे वह उसका पति हो।

देश-देश के राजे महाराजे आये लेकिन किसी से धनुष न उठ सका। अन्त में विश्वामित्र का संकेत पाकर रामचन्द्र ने उस धनुष को न केवल चढ़ा दिया बल्कि उनके हाथ लगते ही उसके तीन टुकड़े हो गये और सीता ने उनके गले में जैमाला डालकर उनको अपना पति स्वीकार किया। विवाह होगया और राम सीता को लेकर अयोध्या में चले आये।

यहाँ दशरथ ने चाहा कि राम को अपना युवराज बनायें मगर केकई को यह बात स्वीकार नहीं हुई। उसने अपने लड़के भरत को राज दिलाना चाहा और राम के लिये १४ वर्ष के बनवास का निर्णय कराया। राम लक्ष्मण और सीता को लेकर बन को चले गये। दशरथ को इतना दुःख और कष्ट हुआ कि उसने उसी दुःख में अपने प्राण दे दिये। भरत ननसाल गये हुये थे। वहाँ से आने पर उनको राम के चले जाने का खेद हुआ। वह राम के पास पहुँचे। लौटने की प्रार्थना की लेकिन राम वापस नहीं आये। विवश होकर भरत उनके नाम पर राज करने लगे।

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

राम घूमते फिरते हुये चित्रकूट पर पहुंचे। वहाँ से पि
और स्थानों पर रवाना हुये। मार्ग में कई ऋषि मुनियों
भेंट हुई। एक स्थान पर रावण की बहन सूर्पनखाँ ने उन
अपने जाल में फंसाना चाहा, मगर वह उसके धोखे में नहीं आये और लक्ष्मण ने उसका अपमान किया। उसके भाई खर व दूषण बहन का बदला लेने के लिये लड़ने आये। राम ने अपने तीरों से उनको मार गिराया।

सूर्पनखा के हृदय में बदला लेने की अग्नि भड़क रही थी। उसने लंका में जाकर अपने भाई रावण को उकसाया और वह पुष्पक विमान पर चढ़ कर एक राक्षस मारीच के साथ जंगल में आया। मारीच ने हिरन का रूप बनाया। सीता धोके में आगई। उसने राम से कहा। इस हिरन को मार लाओ। जब राम इसके मारने को निकले, देर होने के कारण लक्ष्मण को उनकी सहायता व खोज में कुटी से बाहर जाना पड़ा। मैदान खाली पाकर रावण ने साधु का भेष बनाकर सीता से भिक्षा माँगी। लक्ष्मण ने जाते समय कुटी के चारों ओर अपने धनुष से एक गोल घेरा बना दिया था कि कोई व्यक्ति सीता को हानि न पहुँचा सके। सीता ने इस घेरे के भीतर से रावण को भिक्षा देना चाहा मगर वह बड़ा कपटी था। कहने लगा, मैं बाँधी हुई भीख न लूंगा। लाचार होकर अतिथि सत्कार के विचार से वह भीख लेकर बाहर आई और रावण ने अवसर पाकर उसको झट पट अपने विमान पर चढ़ा लिया और आकाश मार्ग से लंका की ओर रवाना हुआ जो त्रिकूट पर्वत की चोटी पर बसा हुआ था।

सीता बड़े आरत स्वर से विलाप करती जाती थी। जटायू पक्षी ने उसका विलाप सुना। वह सहायता करने आया; किन्तु

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

रावण के अग्नि वाण ने उसके पंख और बाल झुल और वह बेबस होकर भूमि पर तड़पने लगा।

जब राम हिरन को मार कर वापस आये। देर नहीं है। अति शोक किया। भाई को साथ लेकर खोज में निकले। मार्ग में जटायु मरने के निकट था। उससे दशमुख रावण के छल और सीता के हर ले जाने का वृतान्त सुना। जटायु ने तो उसी समय प्राण त्याग दिये और राम उसका मृतक संस्कार करके आगे की ओर बढ़े।

कुछ दूर जाने पर उनको शिवरी भीलनी मिली जिसने राम को अपने जूटे बेर अर्पण किये। राम ने उसको बड़ी चाव से खाया। भीलनी ने राम को बताया कि सीता का पता लगाने के लिये उनको सुग्रीव से मित्रता करनी चाहिये और उसकी सहायता से रावण जब पराजित होगा तब ही सीता मिलेगी। भीलनी की आयु अधिक थी। उसने राम का दर्शन पाकर शरीर त्याग दिया और उसका अन्तिम संस्कार भी राम ने अपने हाथों किया।

जब यह ऋष्यमूक पर्वत के निकट पहुँचें, हनुमान बन्दर से भेंट हुई। उन्होंने राम को ढारस दी और अपने राजा सुग्रीव से मिलाया जो बालि नामी अपने भाई के भय से बन बन मारा फिरता था। उसने राम से कहा कि यदि आप बालि को मार कर मुझको राजा बनादें तो मैं सीता की खोज में सहायता दूँ। राम ने इस बात को स्वीकार कर लिया। मगर कठिनाई यह थी कि बालि अत्यन्त बलवान था और उसमें कुछ ऐसी आकर्षण शक्ति थी कि जो कोई शत्रु उसके सम्मुख आता था वह अपने आँखों की शक्ति से उसका आधा बल खींच लिया करता था और उसी विधि से उसको पराजय कर देता था। राम ने वृक्ष के ओट में बैठ कर सुग्रीव को

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

वालि से लड़ने को तत्पर किया। एक बार तो सुग्रीव पर व विजयी होगया। दोनों भाई एक ही रूप के थे। राम दोन में अन्तर न कर सके। दूसरी बार विवेक शक्ति से का लेकर वालि को मार दिया और सुग्रीव को राजा बनाकर वालि के लड़के अङ्गद को अपने साथ लिया। सुग्रीव की मित्रता काम आई। जामवन्त रीछ और नल नील आदि कितने ही बन्दर इनके साथ हो लिये। राम ने इन सब को हनुमान के साथ सीता का पता लगाने के लिये लंका की ओर रवाना किया और आप अपने भाई लक्ष्मण के साथ पंचवटी में ठहर कर उनके लौटने की प्रतीक्षा करने लगे।

जब बन्दरों का समूह खोज करते हुये समुद्र के निकट पहुँचा सबके हाथ पाँव फूल गये। समुद्र का पार करना सहज काम नहीं था। सब बहुत घबराये। अन्त में जामवन्त ने हनुमान को समझाया कि यह पत्थर केवल तुम्हारे उठाने से उठेगा और तुम ही इस काम के लिये नियत हुये हो। हनुमान ने इसकी मंत्रणा को स्वीकार किया। समुद्र में छलांग मार दी मगर उसमें सुरसा नामी राक्षसी रहती थी। उसने इनको निगलना चाहा। ज्यों ज्यों वह अपना मुँह बढ़ाती गई यह भी अपना शरीर बढ़ाते गये। अन्त में छोटा रूप बन कर उसके पंजे से निकल भागे। वह देखती की देखती रह गई। थोड़ी दूर पर एक और राक्षसी ने इन पर आक्रमण किया। इसमें यह शक्ति थी कि जो पक्षी आकाश में उड़ते थे यह उनकी छाया पकड़ कर नीचे की ओर खींच लेती थी और खा जाती थी। हनुमान बड़े बुद्धिमान थे। युक्ति से उससे भी बच निकले और समुद्र पार करके लंका के फाटक पर जा पहुँचे। यहाँ तीसरी राक्षसी लंकिनी उन पर झपटी। हनुमान ने उसको ऐसा घूसा तान कर मारा कि वह बेहोश होगई और

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

चुपके से लंका में प्रवेश कर गये।

लंका में यह सब स्थानों पर सीता की खोज ल... मगर उसका कहीं पता नहीं मिला। तब उन्होंने ... लंका के किसी निवासी को अपना मित्र बनावें। विभीषण जो रावण का छोटा भाई था इनसे मिल गया। उसने अशोक-बाटिका का निशान बताया जहाँ जाकर यह सीता से मिले। उसके समाचार ज्ञात किये और उसको ढारस देकर बाटिका में आकर फल खाने लगे।

यह बाटिका रावण की थी। बाटिका के रक्षकों ने रोक थाम की। इसका परिणाम यह हुआ कि कई राक्षस इनके हाथ से मारे गये। रावण ने इनके आने की सूचना पाई। अपने लड़के मेघनाद को इन्हें पकड़ने के लिये भेजा मगर वह इनको न पकड़ सका। तब उसने ब्रह्मफांस फेंकी और हनूमान स्वयम उसके फांस में आ गये और रावण के दरबार में पहुँचाये गये। रावण ने उनकी पूंछ में कपड़े आदि बाँध कर आग लगा दी और छोड़ दिया। इन्होंने उस आग से यह सहायता ली कि सिवाय विभीषण के शेष सारे राक्षसों के घर जला दिये और समुद्र में कूद कर फिर जिस प्रकार आये थे उसी प्रकार लौट आये और राम को सारे वृत्तान्त कह सुनाये।

ऐ ऋषियो! सीता की खबर मिलने को तो मिल गई मगर लंका तक कैसे पहुँच हो? यह समस्या उपस्थित हुई। हर व्यक्ति तो हनुमान नहीं हैं। तब नल और नील ने कहा कि हम सब लोग समुद्र पर पुल बाँध देंगे। उस समय बन्दर और रीछों की सेना सुगमता से समुद्र को पार कर जायगी।

जब राम समुद्र के निकट आये, विभीषण रावण का भाई स्वयम् लंका से भाग कर उनसे जा मिला। उसने लंका का

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

सारा समाचार कह सुनाया और विभीषण के कारण व लंका के सब भेदों से परिचित हो गये।

राम ने अपने ३ मन्त्री नियुक्त किये-सुग्रीव, विभीषण और जामवन्त। राम हर काम में उनसे परामर्श लेते थे। नल व नील उनकी सेवा के इंजीनियर थे। हनुमान, अंगद और लक्ष्मण सेनापति थे।

जब वह समुद्र के निकट आये, पहले शिवजी की आराधना की। एक भव्य मन्दिर बनाया जो सेतुबन्द रामेश्वर के नाम से विख्यात है। फिर पुल की नींव डाली और जब पुल बन गया राम की सेना ने समुद्र पार करके लंका में प्रवेश किया और रावण के साथ लड़ाई की गई। रावण का एक भाई कुम्भकरण बड़ा योद्धा था। यह छः महीने सोता था और मनों मदिरा व मांस खा जाया करता था। इसने इस प्रकार युद्ध किया कि बन्दरों को दाँतों पसीना आ गया। अन्त में वह मारा गया। फिर मेघनाद जिसने इन्द्र को जीत लिया था सम्मुख आया। लंका में उस जैसा कोई वीर नहीं था और राम की सेना में इतने साहस व बल वाले आदमी नहीं थे। इसको केवल वह व्यक्ति जीत सकता था जिसने अखण्ड ब्रह्मचर्य्य किया हो। यह गुण केवल लक्ष्मण में था। उन्होंने उसको मारा तब लंका पर विजय प्राप्त होने की आशा हुई। फिर तो कई दिनों के संग्राम के पश्चात् रावण भी मारा गया। राम ने उसके दसों सर काट लिये। उसके मुख से एक प्रकार का प्रकाश प्रगट हुआ जो राम के मुख में समा गया। लंका की लड़ाई में रावण के सारे वंश का अन्त हो गया। इस लिये अब तक लोग गाते हैं।

यक लख पूत सवा लख नाती, ता रावण घर दिया न बाती।

सज्जनो ! इस प्रकार लंका पर विजय प्राप्त हुई। फिर दशरथ राम से मिलने के लिये आये। उनको आशीर्वाद दी

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

और राम लंका को जीत करके सीता को साथ लेकर
आये और भरत शत्रुघ्न से मिलकर राज किया औ
शासन किया कि शेर व बकरी एक घाट पानी पीने ल
यह दुनिया स्वर्गधाम बन गई।

यह राम चरित्र का संक्षेप वृतान्त है जो मैंने अपने गुरु याज्ञवल्क से सुना था। वही मैंने इस समय आपको सुनाया है। कहिये यह मनोरंजक है या नहीं ?

इतना कहकर भरद्वाज ऋषि चुप हो गये। सब मुनियों ने उनकी प्रशंसा की; क्योंकि औरों ने अपनी-अपनी कहानी सुनाई थी। इन्होंने राम की कथा सुनाकर सबको प्रसन्न किया था।

जब लोग उनकी प्रशंसा कर चुके, अत्रेय ऋषि ने कहा कि भगवन्! अगर आप कहो तो मैं आप से इस चरित्र का कुछ मानस अर्थ पूछूँ।

भरद्वाज बोले—कहिये आप क्या पूछते हैं ?

अत्रेय जी ने पूछाः—प्रयाग राज क्या है ? गंगा, जमुना, सरस्वती और संगम क्या है ? और अक्षय बट वृक्ष क्या है ?

भरद्वाज ने कहाः—महात्माओं का सत्संग तीर्थराज है। गंगा ज्ञान काण्ड, जमुना कर्म काण्ड और सरस्वती ब्रह्म विचार की कथायें हैं जिनका केवल सत्संग में विचार किया जाता है। यह तीनों वहाँ मिले जुले रूप में रहते हैं, इसी कारण उसमें इनका संगम कहा गया। अक्षय बट विश्वास का विशाल वृक्ष है जिसकी जड़ बहुत मजबूत रहती है, क्योंकि यदि विश्वास न हो तो फिर किसी को सत्संग में जाने और उससे लाभ उठाने का विचार ही न हो।

अत्रेय जी ने प्रश्न कियाः—दशरथ क्या है ? उसकी तीन रानियाँ कौशल्या, केकई, सुमित्रा क्या हैं ? राम, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न कौन हैं ? और उनके साथ रहने का अभिप्राय क्या है ?

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

भरद्वाज बोले—दशरथ यह दस इन्द्रियों वाला शरी तीन रानियाँ इस शरीर की तीन वृत्तियाँ हैं जो सत, रज रूप हैं। इनमें से कौशल्या सतो गुनी, सुमित्रा रजो गुनी केकई तमोगुनी है।

इनके क्रम में चेतन की जो चार धारें निकलती हैं वह राम, लक्ष्मण और भरत शत्रुघ्न हैं। राम सतो गुनी, भरत तमोगुनी और लक्ष्मण व शत्रुघ्न रजोगुनी हैं। सत और तम दोनों में क्रिया शक्ति नहीं है। क्रिया शक्ति केवल रजोगुण में है। इसलिये उसके दो रूप हो गये। एक तो राम के साथ हो लिया, दूसरा भरत के साथ और इनके मेल से उनमें क्रिया शक्ति आगई नहीं तो वह कुछ काम न कर सकते। यह उनके साथ-साथ रहने का कारण है।

अत्रेय ने प्रश्न किया:—जनक क्या है ? सीता कौन है ? हल जोतने और सीता के भूमि में से उत्पन्न होने का अर्थ क्या है ?

भरद्वाज बोले—जनक का अर्थ है पैदा करने वाला। वह मनुष्य का मन है। हल जोतने से अभिप्राय सोचने विचारने और चिन्तन करने से है। भूमि स्थल है जहाँ यह मन स्थिर होकर सोचता है। सीता सत् की वह प्रबल वृति है जो भूमि में गड़े हुये घट से निकलती है। जब मनुष्य किसी कारण सत् से खाली होता है तो शरीर की वही दशा हो जाती है जो अकाल के कारण भूमि की हो जाती है। जब विचार व चिन्तन किया जाता है तब यह प्रगट होती है और फिर शरीर उसी प्रकार लहलहा उठता है जैसे वर्षा के होने से खेत हरे भरे होजाते हैं। ऐ ऋषियो ! रावण रूपी अज्ञान के रजोगुनी भाव के प्रगट होते ही सारा काम छिन्न भिन्न हो जाता है। सतोगुनी सीता उसी के दबाने के लिये पैदा होती है। यह सत् की धार सब नस व नाड़ियों में बिखरी हुई थी। ऋषियों ने चित्त को एकाग्र

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

करके मन रूपी घट में इसको बन्द कर दिया। फि करने से यह बड़ी शक्ति के साथ प्रगट हुई। शरी और नाड़ी ही ऋषि हैं।

अत्रेय ने फिर पूछाः—शिव का धनुष क्या है? राम और सीता के विवाह से क्या अभिप्राय है? और विश्वामित्र कौन हैं?

भरद्वाज ने कहाः—आगा पीछा करने की अवस्था शिव का धनुष है जिस पर कम ही मनुष्य अधिकार पाते हैं और जब तक राम रूपी चेतन की धार उसको नहीं तोड़ देती तब तक सीता की प्राप्ति नहीं होती। शिव तमोगुन का रूप है। इसके तीन रूप हैं। मूढ़ता, चञ्चलता और ज्ञान। विश्वामित्र दृढसंकल्प शक्ति है जो प्रेरणा करके चेतन को इसके तोड़ने की ओर आकर्षित करती है। संकल्प शक्ति का दृढ़ करना यज्ञ व हवन है। विघ्न करने वाले राक्षस मन की चञ्चल वृत्तियाँ हैं। जिनके नाश करने से यज्ञ पूर्ण होता है।

अत्रेय ने कहा—भगवन! दशरथ की मृत्यु केकई के कपट और चौदह वर्ष के बनवास से क्या अभिप्राय है?

भरद्वाज बोले—जब चेतन की धार में पूरी पूरी संकल्प शक्ति आ गई, दशरथ रूपी शरीर उसको राजा बनाना चाहता है। केकई तामसी वृति है जो उसको धोका देती है क्योंकि जब चेतन शक्ति फुरने लगती है तब शरीर का तामसी अङ्ग निर्बल हो जाता है और एक तरह पर यह शरीर मर जाता है। चौदह वर्ष के बनवास से अभिप्राय यह है कि चेतन की धार बिलकुल एक जगह न रहे बल्कि दस इन्द्रियों और चार अंतः-करण के लोकों में भ्रमण करती रहे और उनसे तजुर्बा प्राप्त करके रावण रूपी अज्ञान पर विजयी होने का उपाय सोचे। चेतन की धार इस प्रकार भरमती है और उसके स्थान पर तमोगुन का जौहर जो भरत है स्थित रह कर अयोध्या का

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

राज करता है। अत्रेय ने फिर प्रश्न किया—चित्रकूट क्या है, सूर्पनखा क्या है ? खरदूषण कौन है ?

भरद्वाज बोले—चित्रकूट मन का वह ऊँचा लोक है जहाँ कर्मों के संस्कारों के नक्शों का कूट होता है। सूर्पनखा अज्ञान की धोखा देने वाली वह वृति है जो अपना रूप दिखा कर चेतन धार को मोहित करना चाहती है। खरदूषण भिन्न २ प्रकार के अवगुण, दूषण व दोष हैं जिनका मारना आवश्यक है।

अत्रेय—यह सब ठीक है मगर रावण के सीता को हर ले जाने, बँधी भीख के लेने से इनकार करने और जटायु के मरने का क्या अर्थ होता है ?

भरद्वाज ने उत्तर दिया--राम रूपी चेतन के अंश ने चूंकि सूर्पनखा का अपमान किया और खरदूषण को मारा उनकी संकल्प शक्ति आवश्यकता से अधिक इधर आकर्षित हुई। उनमें अहम् भाव आ गया इसलिये अज्ञान ने सत् भाव को अपने आधीन बना लिया। बँधी हुई भीख लेने से रावण की हानि होती है। जब लोग किसी प्रकार का अनुष्ठान करते हैं अपने चारों ओर विचार से मानसिक घेर बना लेते हैं ताकि कोई उन पर प्रभाव न डाल सके। इसलिये लक्ष्मन रूपी मन के लक्ष्म अङ्ग ने यह काम किया था। अज्ञान ने धोखे से उसको तोड़ दिया। सीता को ले गया। जटायु मन की वह खेंचातान करने वाली वृति है जो सत भाव को अलग करना नहीं चाहती। इसलिये अज्ञान ने उसको घायल कर दिया और सीता को ले भगा। तुम देखते हो जब किसी से कोई बुरा काम होने को होता है उसका अन्तःकरण उसको रोकता है। लेकिन जब अनसमझी से वह काम कर ही डालता है तब अन्तः-करण का खून हो जाता है। ऐ ऋषियो ! वास्तव में सत् भाव वाली सीता दूर नहीं होती केवल उसकी छाया मात्र दूर होती

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

है। यदि वह बिलकुल दूर हो जाय तो फिर शरीर न सकता।

अत्रेय ने प्रसन्न होकर कहा कि यह ठीक है मगर शि भीलनी क्या वस्तु है ? ऋष्यमूक पर्वत क्या है ? हनुमान, बालि, सुग्रीव और अंगद क्या है ? और राम ने बालि को वृक्ष के ओट से क्यों मारा था ?

भरद्वाज हँसे—ऐ ऋषियो ! शिवरी भीलनी भगवान की भक्ति है। जब मन व्याकुल होता है तब भक्ति करता है। ऋष्यमूक पर्वत चुप्पी, सन्तोष और अभ्यास की अवस्था है। इस अवस्था के आजाने से और भक्ति के पुण्य प्रताप से हनुमान मिलता है जो दीनता का अंग है जिसमें मान नहीं होता मगर साथ ही उसको काम अंग से मुठभेड़ करना पड़ता है। बालि स्थूल काम अंग का नाम है। इस पर कोई व्यक्ति आमने सामने विजयी नहीं हो सकता। काम जब मारा जायगा आड़ ही से मारा जायगा। सुग्रीव भी दीनता का एक अंग है जो काम के रूप का है। दीनता और काम दोनों अपने फ़र्ज के लिये सब कुछ कर डालते हैं। इसलिये उनमें समानता है। राम ने बालि को मार दिया और सुग्रीव को अपना साथी बना लिया। अंगद काम के अंग का जौहर या इत्र है। यदि काम को बिल्कुल मार दिया जाय तो फिर कुछ भी व्यवहार नहीं हो सकता। इसलिये जहाँ उनके स्थूल अंग को दबाना हो वहाँ उसके सूक्ष्म अङ्ग को साथ ले लेना चाहिये ताकि निर्बलता न आने पाये।

अत्रेय ने पूछा—मैंने तुम से बहुत से प्रश्न किये। बहुत समय ले लिया। मगर क्या करूँ जी चाहता है कि तुम्हारी इस राम कहानी का अर्थ अच्छी तरह समझ में आ जाय। इसलिये प्रश्न करना ही पड़ता है। अब यह बताइये कि जामवंत

क्या है ? समुद्र क्या है और तीन राक्षसियों ने जो हनु
पर हमले किये थे वह कौन हैं ?

भरद्वाज बोले—जामवन्त मन की गति देने वाली शक्ति है जिसने हनुमान को लंका जाने के लिये प्रेरणा की। समुद्र बीच की वह दूरी है जिसके पार अज्ञान का स्थान है। तीन राक्षसियाँ माया की तीन रूप हैं। सुरसा स्थूल माया है। छाया पकड़ कर निगलने वाली राक्षसी सूक्ष्म माया है। लंकिनी कारण माया है। जब तक इन पर अधिकार न मिले कभी कोई ज्ञान को जान नहीं सकता।

अत्रेय बोले—समुद्र के तट पर शिव की आराधना क्यों की गई ? रावण, कुम्भकरण और विभीषण कौन हैं ? राम ने सुग्रीव, जामवन्त और विभीषण को अपना मंत्री क्यों बनाया ?

भरद्वाज ने कहा—शिव गुरू का स्वरूप है। यही इष्ट (ध्येय) है। यही आदर्श है। इसलिये अज्ञान के नाश करने से पहले इसकी आराधना करना चाहिये। रावण अज्ञान की रजोगुणी अवस्था है जिसके दस सिर दस इन्द्रयों की शक्तियाँ हैं। कुम्भकरण अज्ञान की तमोगुणी अवस्था का नाम है। विभीषण अज्ञान की सतोगुणी वृत्ति है। ज्ञानी इस सतोगुनी वृत्ति को तो साथी बना लेते हैं शेष रजोगुनी और तमोगुनी वृत्तियों का नाश करते हैं। अगर यह न मिले तो अज्ञान पर विजय प्राप्त नहीं होती।

तुमने पूछा है कि तीन मन्त्री क्यों हैं ? सुग्रीव, जामवन्त और विभीषण मन के तीन अङ्ग हैं। सुग्रीव मन का राजसी अङ्ग है जो बंदर की तरह चंचल है। जामवन्त मन का तामसी अंग है जो आलस्य और सुस्ती का नमूना है। तुम देखो रीछ के रूप ही से तमोगुण वरसता है। विभीषण मन का सतोगुणी अङ्ग है जो सोचने वाला, विचारने वाला और जानने वाला

है। जब तक यह तीनों सम्मिलित न हों कैसे काम इसलिये इनको सर्वाङ्ग से अपना बनाना होता है।

अत्रेय ने प्रश्न किया—मेघनाद क्या है। दशर दोबारा जीने का क्या तात्पर्य है ?

भारद्वाज बोले—मेघनाद अज्ञान की महान शक्ति है जिसकी मिली जुली हैसियत है और जिसके बल और पराक्रम से रावण ने देवताओं को बस में कर लिया था। जैसे यह उसके बल का इत्र है वैसे ही लक्ष्मण का अखण्ड ब्रह्मचर्य का साधन सब जप-तप भक्ति भाव का संगठित दल है। सिवाय ऐसे ब्रह्मचर्य के इसको अपने आधीन लाना कठिन होता है। इसलिये लंका को जीतने का टीका लक्ष्मण के माथे पर लगाया जाता है।

दशरथ के दोबारा जीवन से यह अभिप्राय है कि शरीर चाहे स्थूल रूप से मृतक हो गया मगर सूक्ष्म अवस्था से उसको फिर जीवन मिला। अब वह इस प्रकार संसार के जाल में न फँसेगा और इनसे मिलकर राम ने सीता को लेकर फिर अयोध्या रूपी शरीर में आकर अखण्ड राज किया।

ऐ ऋषियो ! इस प्रकार ज्ञानी ज्ञान को प्राप्त कर लेता है। फिर शरीर रखते हुए भी संसार के व्यवहार में उसको क्षति नहीं पहुंचती और वह चेतन और आत्म वृत्ति में विचरता है। यही मेरी कथा का सार है।

इतना वर्णन करने के पश्चात भरद्वाज चुप हुए और उन्होंने एक मति होकर कहा कि भाई ! तुम्हारी कथा सबसे श्रेष्ठ है।

—०—

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

महर्षि शिवव्रतलाल जी महाराज कृत

हिन्दी की पुस्तकों का परिचय पत्र

महारामायण—महर्षि जी ने रामायण के सात काण्ड योग साधन की सात सीढ़ियाँ बताकर गुप्त विधियों को स्पष्ट-रूप से वर्णन किया है और भगवान राम के जीवन से उसे प्रगट किया है। प्रत्येक मनुष्य को अपना जीवन क्रियात्मक साँचे में ढालने के लिये अमूल्य रत्न है। प्रथम संस्करण समाप्त-सा है। इसके दो खंड—

अनुभव खंड व सिद्धि खंड बड़े महत्व के हैं। इनका मूल्य १॥, ।

आत्मिक प्रायमर उर्फ़ आत्म ज्ञान प्रकाश—जीवन के ध्येय को समझाने वाली, भूले और भ्रमों में फँसे हुये लोगों को स्पष्ट रूप से सद्मार्ग दिखाने वाली सरल और सुगम भाषा की बड़ी उत्तम पुस्तक है। मू० ॥)

क़ानून ख्याल—जैसा कि इस पुस्तक के नाम से प्रकट है इसमें विचार का नियम या क़ानून क्या है, कैसे काम करता है, उचित और अनुचित विचारों का क्या फल होता है, विचार में क्या-क्या शक्ति भरी पड़ी है आदि आदि, विषयों पर काफी प्रकाश डाला गया है। बड़े महत्व की पुस्तक है। मू० १)

जैन वृतान्त—जैन राजघराने के महात्माओं और देवियों के त्याग, वैराग, घोर तपस्याओं और संयम नियम की गाथायें बड़ी शिक्षाप्रद हैं। चूँकि महापुरुष किसी जाति, धर्म या समाज विशेष की सम्पत्ति नहीं होते, उनके उपदेश और जीवनी सभी के लिये लाभप्रद होती हैं। मू० ॥)

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

दृष्टान्त संदेश—दृष्टान्तों द्वारा जीवन के सुधार के आत्मिक ज्ञान के गूढ़ विषयों को बड़ी सुगमता से सम गया है। मू० १)

हितोपदेश—महर्षि जी ने अपनी अल्प आयु की न वधू को जो उपदेश दिये हैं, इसमें वर्णन है। स्त्रियों के लिये बड़ी उपयोगी है। मू० ॥)

आदर्श भारतीय वीरांगनायें—साहस, वीरता, त्याग और प्रेम के भावों को भरने वाली गाथायें हैं। मू० १)

आदर्श भारतीय महिलायें—भारतीय नारियों के आदर्श जीवन की पतिव्रत धर्म, ज्ञान और प्रेम भक्ति से परिपूर्ण कथायें हैं, जो जीवन में अनुपम जागृति उत्पन्न करनेवाली हैं। मू० १)

उपन्यास के ढंग पर ऐतिहासिक पुस्तकें

(इनको पढ़कर कल्पित उपन्यास पढ़ना भूल जायेंगे)

शाही पतिपरायण—गुजरात देश की रानी के पतिव्रत धर्म का आदर्श और त्याग व प्रेम का रोमाँचकारी, हृदय विदारक और शिक्षाप्रद वर्णन है। मू० १।)

शाहीभूत—देश के एक गद्दार और नमक हराम ने किस प्रकार कुटिलता से चित्तौड़गढ़ का पतन कराया और उसके भ्रष्टाचार पूर्ण कृत्यों का अन्तिम परिणाम कितना दुखदाई हुआ तथा भूतयोनि की व्याख्या और मानव विचारों का पुनर्जन्म अथवा भूतयोनि से सम्बन्धित वर्णन है। मू० १)

गिरहदार मोती—एक ऐतिहासिक घटना का बड़ा प्रभावशाली, शिक्षाप्रद और रोमाँचकारी वर्णन है। मू० १)

इब्राहीम अधम—एक मुसलमान बादशाह के प्रेम, भक्ति, सादा जीवन और राज के त्याग का बड़ा हृदय विदारक वर्णन है। मू० ॥=)

डाक खर्च सब का अलग है।